सत्साधु-स्मरण-

मंगलपाठ

जुगलकिशोर मुख़्तार

प्रकीर्णक-पुस्तकमालाका पंचम पुष्प

सत्साधु-स्मरण-मंगलपाठ

संयोजक और अनुवादक

जुगलकिशोर मुख्तार, 'युगवीर'

सरसावा जि० सहारनपुर

[ग्रन्थपरीक्षा ४ भाग, स्वामी समन्तभद्र, जिनपूजाधिकारमीमांसा, उपासनातत्त्व, विवाहसमुद्देश्य, विवाहक्षेत्रप्रकाश, जैनाचार्योंका शासनभेद, वीरपुष्पाञ्जलि, हम दुखी क्यों हैं, मेरीभावना, अनित्यभावना, महावीरसंदेश, सिद्धिसोपान और भगवान महावीर और उनका समय आदि अनेक ग्रन्थोंके रचयिता तथा अनेकान्तादि पत्रोंके सम्पादक]

प्रकाशक

वीर-सेवा-मन्दिर

सरसावा जि० सहारनपुर

प्रथमावृत्ति	आश्विन, वीरनिर्वाण सं० २४७०	मूल्य
१००० प्रति	विक्रम संवत् २००१ सन् १९४४	आठ आने

पुस्तकानुक्रम

१	समर्पण	३
२	धन्यवाद	४
३	चित्र-परिचय (जीवन-संक्षेप)	५
४	प्रस्तावना	७
५	विषय-सूची	११
६	सत्साधु-स्मरण-मंगलपाठ	१–७४
७	पद्यानुक्रम	७५

रामा प्रिंटिङ्ग प्रेस,

चावड़ीबाजार, देहली।

समर्पण

'त्वदीयं वस्तु भो विद्वन् !
तुभ्यमेव समर्पितम् ।'

सत्साधुओंके स्मरणको लिये हुए जिन आचार्यों अथवा विद्वानोंके जिन वाक्योंकी इस पुस्तकमें संयोजना की गई है वे वाक्यरत्न, उन वाक्योंके मर्मको व्यक्त करने-वाले अनुवादरूप व्यञ्जकमणिके साथ जड़ कर, उन्हीं महानुभावोंको, यह कहते हुए, सादर समर्पित हैं कि—

'हे विद्वद्गण ! यह आपकी चीज़ है,
इस लिये आपको ही समर्पित है।'

संयोजक

धन्यवाद

श्रीमान् बाबू नन्दलालजी जैन, सुपुत्र सेठ रामजीवनजी सरावगी, कलकत्ताने अपनी इकलौती पुत्री स्वर्गीया श्रीमती तारावाई खेमकाकी पवित्र स्मृतिमें, उसकी अन्तसमयसे कुछ दिन पहलेकी इच्छाके अनुसार, एकहजार रुपयेकी रकम 'वीरसेवा-मन्दिर' सरसावाको ग्रन्थ प्रकाशनार्थ प्रदान की है। उसी सहायतासे यह सुन्दर पुस्तक प्रकाशित की जा रही है और आगे और भी पुस्तकें प्रकाशित होंगी। इस उदारता और श्रुतसेवाके लिये आपको हार्दिक धन्यवाद है।

प्रकाशक

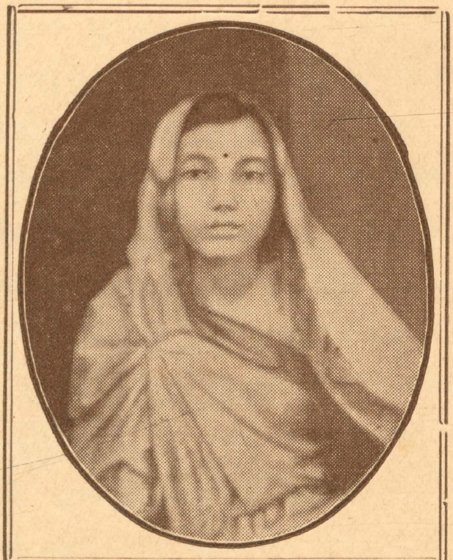

स्व० श्रीमती ताराबाई

चित्र-परिचय

(जीवन-संक्षेप)

—***—

जिस सुन्दर सुकुमार चित्रको पाठक अपने सामने देख रहे हैं वह कलकत्ताके सुप्रसिद्ध व्यवसायी सेठ रामजीवनजी सरावगीकी पौत्री और बाबू नन्दलालजी जैनकी इकलौती पुत्री श्रीमतो तारावाईका चित्र है, जिसका जन्म कलकत्ता नगरमें प्रथम श्रावण शुक्ला त्रयोदशी विक्रम संवत् १६८५ को हुआ, जिसने सावित्री पाठशालामें लौकिक और ५र५र धार्मिक शिक्षा प्राप्त की, दोनों प्रकारकी शिक्षा प्राप्त करलेनेपर जिसका विवाह-संस्कार कलकत्तामें ही फतहपुर निवासी स्व० सेठ बालूरामजी खेमकाके ज्येष्ठ सुपुत्र चि० बाबू शिवप्रसादजी खेमकाके साथ हुआ, युद्धके कारण कलकत्तामें भगदड़ मच जानेपर वैसाख शुक्ला पंचमी संवत् १६६६ को जिसके द्विरागमनकी रस्म राजगृही (राजगिरि) में की गई, जो फतहपुर ससुरालमें जाकर कोई दो महीने बाद ही श्रावण मासमें बीमार पड़ गई, जिसने अपनेको अस्वस्थ देखकर और धार्मिक भावनासे प्रेरित होकर पिताजीको अपने बाल्यकालकी जोड़ी हुई पूंजीमेंसे एक हजार रुपयेके दानकी प्रेरणा की, और जो अन्तमें सभी योग्य उपायोंके निष्फल

होनेपर भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी सं० १९९९ को १४ वर्षकी अवस्थामें ही अपनी यह जीवन लीला समाप्त कर गई ! और उसके द्वारा संसारकी असारताका सजीव पाठ पढ़ाते हुए यह बतला गई कि—जीवन क्षणभंगुर है, उसका कोई भरोसा नहीं, उसकी स्थिरताके भरोसे रहकर किसीको भी आत्म-विस्मरण न करना चाहिए—सदा ही सत्साधुओंकी तरह आत्म-साधनामें तत्पर रहना चाहिए। रोगादिकके आ धर दबानेपर इच्छा रहते भी फिर कुछ नहीं बनता और आयुका कब अन्त आजाए इसका किसीको पता नहीं। साथ ही, यह भी बतला गई कि बाल्य-विवाहसे किसीको भी सुख नहीं मिलता।

यह सुशील बालिका धार्मिक रुचिको लिए हुए अच्छी तीक्ष्ण-बुद्धि थी और सबको प्रिय मालूम देनेवाली एक विकासोन्मुख सुन्दर सुकुमार कली थी, जिसके अकालमें ही काल-कवलित होजानेसे माता-पिता तथा अन्य कुटुम्बीजनोंको भारी आघात पहुँचा है। साथ ही समाजकी भी कुछ कम क्षति नहीं हुई है। स्वर्गीय आत्माको परलोकमें सुख-शान्तिकी प्राप्ति होवे।

प्रस्तावना

—:*:o:*:—

सत्साधुओंका स्मरण बड़ा ही मंगल-दायक है। 'चत्तारि मंगलं'में 'साहू मंगलं' पदके द्वारा साधुओंको भी मंगलमय निर्दिष्ट किया है। सत्साधुजन अहिंसादि पंच व्रतोंका पालन करते हुए कषायोंको जीतते हैं, इन्द्रियोंका निग्रह करते हैं—,इन्द्रियों-को अपने अधीन रखते हैं—इन्द्रियोंके विषयोंकी आशा नहीं रखते हैं, आरम्भ तथा परिग्रहसे रहित होते हैं और ज्ञान, ध्यान एवं तपमें सदा लीन रहते हैं। और इस तरह आत्मसाधना करते हुए अपना आत्मविकास सिद्ध करते हैं तथा अपने आदर्शादि द्वारा दूसरोंके आत्मविकासमें सहायक होते हैं। इसीसे सत्सा-धुओंको सुकृती, पुण्याधिकारी, पुण्यात्मा, पूतात्मा और पुण्यमूर्ति जैसे नामोंसे भी उल्लेखित किया जाता है। ऐसे पूतात्मा साधु-पुरुषोंका संसर्ग अथवा सत्संग जिस प्रकार आत्माको जगाने, ऊंचा उठाने और पवित्र बनानेमें सहायक होता है उसी प्रकार उनके पुण्यगुणोंका स्मरण भी पापोंसे हमारी रक्षा करता है और हमें पवित्र बनाता हुआ आत्मविकासकी ओर अग्रसर करता है। जैसा कि स्वामी समन्तभद्रके निम्न वाक्यसे प्रकट है :—

'तथापि ते पुण्यगुणस्मृतिर्नः पुनाति चित्तं दुरिताञ्जनेभ्यः।'

—स्वयम्भू स्तोत्र

स्वामी समन्तभद्रने जहाँ परमसाधुओंके स्तवनको 'जन्मारण्य-शिखी'—जन्म-मरणरूपी संसार-वनको भस्म करनेवाली अग्नि-बतलाया है वहां 'स्मृतिरपि क्लेशाम्बुधेर्नौ' इस वाक्यके द्वारा उनकी स्मृतिको दुःख-समुद्रसे पार करनेके लिये नौका भी प्रकट किया

है*। वे इन स्तवनों तथा स्मरणोंको कुशल परिणामका—पुण्य-प्रसाधक शुभ भावोंका—कारण बतलाते हैं और इनके द्वारा श्रेयोमार्गका सुलभ तथा स्वाधीन होना प्रतिपादन करते हैं‡। और यह उनका केवल बतलाना तथा प्रतिपादन करना ही नहीं बल्कि स्वानुभवपूर्ण कथन है—वे स्वयं इन स्मरणादिकोंके रूपमें की गई सेवाके प्रभावसे ही अपनेको तेजस्वी, सुजन तथा सुकृती (पुण्यवान्) होना प्रकट करते हैं†। और इससे इन स्मरणोंका महत्व बिलकुल स्पष्ट होजाता है।

जब जब मैं स्वामी समन्तभद्रादि जैसे महान् आचार्योंके पुरातन स्मरणोंको पढ़ता रहा हूँ तब तब मेरे हृदयमें बड़े ही पुष्ट विचार उत्पन्न हुए हैं, औद्धत्य तथा अहंकार मिटा है, अपनी त्रुटियोंका बोध हुआ है और गुणोंमें अनुराग बढ़कर आत्म-विकासकी ओर कुछ रुचि पैदा हुई है। साथ ही, अनेक उलझने भी सुलझी हैं। इन स्मरणोंको पढ़ते हुए सदा ही मेरी यह भावना रही है कि मुझे जो आनन्द तथा लाभ इनसे प्राप्त होता है वह दूसरोंको भी होवे। इसीसे मैं कितने ही स्मरणोंको, उनके मर्मस्पर्शी हिन्दी अनुवादके साथ 'अनेकान्त' पत्रमें प्रकट करता रहा हूँ। बहुत दिनोंसे मेरी इच्छा थी कि मैं उन सब स्मरणोंको, जो मेरी मति तथा स्मृतिको प्रदीप्त करते हुए मेरे आनन्दका विषय रहे हैं, एक मंगलपाठके रूपमें संयोजित करूँ, जिससे इधर उधर बिखरे हुए उत्तम स्मरणोंका एक अच्छा एकत्र संग्रह होजाय और उससे सभी जन यथेष्ट लाभ उठा सकें। उसीके फलस्वरूप आज यह

* देखो, जिनशतक पद्य ११५।

‡ देखो, स्वयम्भूस्तोत्र पद्य ११६। † देखो, जिनशतक पद्य ११४।

सानुवाद मंगलपाठ पाठकोंकी सेवामें प्रस्तुत है और इसे प्रस्तुत करते हुए मुझे बड़ा ही आनन्द होता है।

इस मङ्गलपाठमें अनेक सत्साधुओंके पुण्य स्मरणोंकी संयोजना की गई है। श्रीवीर जिनेन्द्र और उनके उत्तरवर्ती गणधरादि २१ महान् प्रभावशाली आचार्योंके महत्वपूर्ण स्मरणोंका यह संग्रह है, जिनके स्मरणकर्ता अनेक आचार्य, भट्टारक, विद्वान्, कविजन अथवा शिलालेखोंके लिखानेवाले महानुभाव हुए हैं। स्मरणकर्त्ता आचार्योंमें कितने ही आचार्य तो इतने महान् हैं कि वे खुद भी अनेक आचार्यों तथा विद्वानों आदिके द्वारा स्मरण किये गये हैं; जैसे स्वामी समन्तभद्र, अकलङ्क, विद्यानन्द, वीरसेन, और जिनसेनादिक। इन स्मरणोंकी संख्या सब मिलाकर १३६ है। जिन महान् आत्माओंके ये स्मरण हैं उन्हें यथासाध्य कालक्रमसे रक्खा गया है; परन्तु स्मरणकर्त्ताओंमें कालक्रमके नियमको चरितार्थ नहीं किया गया, उनके स्मरणोंका संकलन विषयादिककी कुछ दूसरी ही दृष्टिको लिये हुए है। जहाँसे जो स्मरण लिये गये हैं उन ग्रन्थादिकोंके नाम मूल स्मरणोंके नीचे दे दिये गये हैं। साथ ही, शिलालेखोंको छोड़कर, अन्य सब स्मरणकर्त्ताओंके शुभनाम भी साथमें दे दिये गये हैं, जिससे स्मृत व्यक्तियों और स्मरणकर्त्ताओंका एक साथ बोध हो सके।

आचार्योंमें सबसे अधिक संस्मरण स्वामी समन्तभद्रके हैं और वे इस पुस्तकके २७ पृष्ठोंपर आये हैं; जबकि अकलङ्कादिक दूसरे महान् आचार्योंके स्मरण ५, ४, ३, २ आदि पृष्ठोंपर ही आसके हैं। समन्तभद्रके गुणों, उपकारों और उनकी मौलिक कृतियोंका कुछ ऐसा प्रभाव सर्वत्र व्याप्त हुआ है कि श्रीअकलङ्क-

देव, विद्यानन्द, जिनसेन और वादिराज जैसे महान् आचार्यों और कविनागराज जैसे भक्तहृदय विवेकी विद्वानोंने उनका खूब खुलकर यशोगान किया है। आचार्य विद्यानन्द तो उनके गुणों-का कीर्तन करते करते अँघाए ही नहीं। ऐसा मालूम होता है कि वे इन्द्रकी तरह सहस्रनयन बनकर समन्तभद्रकी ओर बराबर देखते रहे हैं और तृप्त नहीं हो पाये।

ये सब संस्मरण स्मृत व्यक्तियोंके कितने ही इतिहास, प्रभाव उपकार, माहात्म्य, गुणोत्कर्ष और साहित्य-सेवादिके उल्लेखों-को लिये हुए हैं, आत्मामें एक प्रकारकी स्फूर्ति-जागृति उत्पन्न करते हैं और विशुद्धता लाते हैं। इनमें जैनधर्मके विश्वव्यापी प्रभाव तथा आत्माकी अचिन्त्य शक्तियोंका दर्शन होता है। जैन-धर्मकी नीति और उसके मूलसिद्धान्तोंका इनसे कितना ही पता चलता है, पूर्वजोंका गौरव मूर्तिमान होकर सामने आ जाता है, अपने कर्तव्यका बोध होता है और आत्मविकास तथा लोकसेवा-के लिये कुछ-न-कुछ करनेको जी चाहता है। और इस तरह ये संस्मरण बहुत उपकारी तथा मङ्गलकारी हैं। हमें नित्य ही इनका पाठ करके अपने आत्माको पवित्र करना तथा ऊँचे उठाना चाहिये।

जिन आचार्योंके स्मरणोंका यहाँ संकलन किया गया है वे विक्रम संवत् से कोई ४७० वर्ष पहलेसे लेकर विक्रमकी ११वीं शताब्दी तक हुए हैं। मैं उनका और उनके स्मरणकर्ताओंका समयादिके साथ कुछ ऐतिहासिक विशेष परिचय और देना चाहता था, परन्तु अनवकाशसे लगातार बहुत ज्यादा घिरा रहनेके कारण मैं उसे इस समय नहीं दे सका। पुस्तकके दूसरे संस्करणके अव-सरपर उसे देनेका यत्न किया जायगा।

वीर-सेवा-मन्दिर, सरसावा

जुगलकिशोर मुख्तार

विषय-सूची

विषय		पृष्ठ
१ मङ्गलाचरण	...	१
२ लोक-मङ्गल-कामना	....	२
३ नित्यकी आत्म-प्रार्थना	....	३
४ साधु-वेष-निदर्शक जिन-स्तुति	....	४
५ परमसाधु-मुख-मुद्रा	....	६
६ सत्साधु-वन्दन	....	७
७ श्रीवीर-वर्द्धमान-स्मरण	....	६-१५
१ वीर-जिन-वन्दन	....	६
२ वीर-जिन-स्तवन	....	१०
३ वीर-शासनाभिनन्दन	....	१३
८ श्रीगौतम-गणधर-स्मरण	....	१६
९ श्रीभद्रबाहु-स्मरण	....	१७
१० श्रीगुणधर-स्मरण	....	१८
११ श्रीधरसेन-स्मरण	....	१९
१२ श्रीपुष्पदन्त-स्मरण	....	२०
१३ श्रीभूतबलि-स्मरण	....	२०
१४ श्रीकुन्दकुन्द-स्मरण	....	२१
१५ श्रीउमास्वाति(मि)-स्मरण	....	२३
१६ स्वामि-समन्तभद्र-स्मरण	....	२५-५१
१ समन्तभद्र-वन्दन	....	२५

विषय		पृष्ठ
२ समन्तभद्र-स्तवन	....	२७
३ समन्तभद्र-अभिनन्दन	....	२९
४ समन्तभद्र-कीर्तन	....	३०
५ समन्तभद्र-प्रवचन	....	३१
६ समन्तभद्र-प्रणयन	....	३५
७ समन्तभद्र-वाणी	....	३७
८ समन्तभद्र-भारती	....	४०
९ समन्तभद्र-शासन	....	४४
१० समन्तभद्र-माहात्म्य	....	४५
११ समन्तभद्र-जयघोष	....	४८
१२ समन्तभद्र-विनिवेदन	....	५०
१३ समन्तभद्र-हृदिस्थापन	....	५१
१७ श्रीसिद्धसेन-स्मरण	....	५२
१८ श्रीदेवनन्दि-पूज्यपाद-स्मरण	....	५३
१९ श्रीपात्रकेसरि-स्मरण	...	५७
२० श्रीअकलङ्क-स्मरण	...	५९
२१ श्रीविद्यानन्द-स्मरण	...	६४
२२ श्रीमाणिक्यनन्दि-स्मरण	...	६५
२३ श्रीअनन्तवीर्य-स्मरण	...	६६
२४ श्रीप्रभाचन्द्र-स्मरण	...	६७
२५ श्रीवीरसेन-स्मरण	...	६९
२६ श्रीजिनसेन-स्मरण	...	७२
२७ श्रीवादिराज-स्मरण	...	७३

ॐ

णमो लोए सव्वसाहूणं

सत्साधु-स्मरण-
मंगलपाठ

मंगलं भगवान् वीरो
मंगलं गौतमो गणी ।
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो
जैनधर्मोऽस्तु मंगलम् ॥

१

लोक-मङ्गल-कामना

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः
काले काले च सम्यग्विकिरतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ।
दुर्भिक्षं चौर-मारी क्षणमपि जगतां मा स्म भूज्जीवलोके
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्व-सौख्य-प्रदायि ॥

—जैन नित्यपाठ

'सम्पूर्ण प्रजा-जनोंको भले प्रकार कुशल-क्षेमकी प्राप्ति होवे—सारी जनता यथेष्टरूपमें सुखी रहे—राजा शक्तिसम्पन्न और धार्मिक बने—धर्ममें अच्छी तरह निष्ठावान् (श्रद्धा एवं प्रवृत्तिको लिये हुए) होवे—अथवा धार्मिक राजाका बल खूब बढ़े (जिससे अन्याय-अत्याचारोंका मुख न देखना पड़े), समय समयपर ठीक वर्षा हुआ करे—अतिवृष्टि, अल्पवृष्टि और अनावृष्टिसे किसीको भी पाला न पड़े—, व्याधियाँ—बीमारियाँ नाशको प्राप्त हो जावें, जगत्के जीवोंको दुर्भिक्ष (अकाल), चोरी, और मरी (प्लेग-हैज़ा आदि संक्रामक रोगों)की बला एक क्षणके लिये भी न सतावे, और जैनेन्द्र-धर्मचक्र—श्रीजिनेन्द्रका उत्तमक्षमा-मार्दव-आर्जव-सत्य-शौच-संयम-तप-त्याग-आकिंचन्य-ब्रह्मचर्यरूप दशलक्षणधर्म अथवा सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप रत्नत्रयधर्म—, जो सब जीवोंको सुखका देने वाला अथवा पूर्ण सुखका प्रदाता है वह लोकमें सदा अस्खलितरूपसे निर्बाध प्रवर्ते—उसमें कभी कोई बाधा न पड़े।'

२

नित्यकी आत्म-प्रार्थना

शास्त्राऽभ्यासो जिनपति-नुतिः सङ्गतिः सर्वदार्यैः
सद्वृत्तानां गुण-गण-कथा दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्याऽपि प्रिय-हित-वचो भावना चाऽऽत्मतत्त्वे
सम्पद्यन्तां मम भव-भवे यावदेतेऽपवर्गः ॥

—जैन नित्यपाठ

'जब तक मुझे अपवर्गकी—मोक्षकी—प्राप्ति नहीं होती तब तक भव-भवमें—जन्म-जन्ममें—मेरा शास्त्र-अभ्यास बना रहे—मैं ऐसे ग्रन्थोंके स्वाध्यायसे कभी न चूकूँ जो आप्त-पुरुषोंके कहे हुए अथवा आप्तकथित विषयका प्रतिपादन करनेवाले हों, तत्त्वके उपदेशको लिये हुए हों, सर्वके लिए हितरूप हों, अबाधित-सिद्धान्त हों और कुमार्गसे हटाने वाले हों—; साथ ही, जिनेन्द्र-के प्रति मैं सदा ही नम्रीभूत रहूँ—सर्वज्ञ, वीतराग और परम-हितोपदेशी श्रीजिनदेवके गुणोंके प्रति मेरे हृदयमें सदा ही भक्तिभाव जाग्रत रहे—; मुझे नित्य ही आर्यपुरुषोंकी—सत्पुरुषों-की— संगतिका सौभाग्य प्राप्त होवे—कुसङ्गतिमें बैठने अथवा दुर्जनोंके सम्पर्कमें रहकर उनके प्रभावसे प्रभावित होनेका कभी भी अवसर न मिले—; सच्चरित्र-पुरुषोंकी गुण-गण-कथा ही मुझे सदा आनन्दित करे—मैं कभी भी विकथाओंके कहने-सुननेमें प्रवृत्त न होऊँ—; दोषोंके कथनमें मेरी जिह्वा सदा ही मौन

धारण करे—मैं कषायवश किसीके दोषोंका उद्घाटन न करूँ—; मेरी वचन-प्रवृत्ति सबके लिये प्रिय तथा हितरूप होवे—कषाय-से प्रेरित होकर मैं कभी भी ऐसा बोल न बोलूँ अथवा ऐसा वचन मुँहसे न निकालूँ जो दूसरोंको अप्रिय होनेके साथ साथ अहितकारी भी हो—; और आत्म-तत्त्वमें मेरी भावना सदा ही बनी रहे—मैं एक क्षणके लिये भी उसे न भूलूँ, प्रत्युत उसमें निरन्तर ही योग देकर आत्म-विकासकी सिद्धिका बराबर प्रयत्न करता रहूँ। यही मेरी नित्यकी आत्म-प्रार्थना है।'

३

साधु-वेष-निदर्शक जिन-स्तुति

[परमसाधु श्रीजिनदेव—जैनतीर्थंकर—अपनी योग-साधना एवं अर्हन्त-अवस्थामें वस्त्रालंकारों तथा शस्त्रास्त्रोंसे रहित होते हैं। ये सब चीजें उनके लिये व्यर्थ हैं। क्यों व्यर्थ हैं? इस भावको कविवर वादिराजसूरिने अपने 'एकीभाव' स्तोत्रके निम्न पद्यमें बड़े ही सुन्दर एवं मार्मिक ढंगसे व्यक्त किया है और उसके द्वारा ऐसी वस्तुओंसे प्रेम रखनेवालोंकी असलियतको भी खोला है। इसीसे यह स्तुति, जो सत्यपर अच्छा प्रकाश डालती है, बड़ी ही प्यारी मालूम होती और अतीव शिक्षाप्रद जान पड़ती है।]

आहार्येभ्यः स्पृहयति परं यः स्वभावादहृद्यः
शस्त्र-ग्राही भवति सततं वैरिणा यश्च शक्यः।

सर्वांगेषु त्वमसि सुभगस्त्वं न शक्यः परेषाम्
तत्किं भूषा-वसन-कुसुमैः किं च शस्त्रैरुदस्त्रैः ॥

'हे परमसाधु श्रीजिनदेव! शृंगारोंके लिये बड़ी बड़ी इच्छाएँ वही करता है जो स्वभावसे ही अमनोज्ञ अथवा कुरूप होता है, और शस्त्रोंका ग्रहण-धारण भी वही करता है जो वैरीके द्वारा शक्य-जय्य अथवा पराजित होनेके योग्य होता है। आप सर्वाङ्गोंमें सुभग हैं—कोई भी अङ्ग आपका ऐसा नहीं जो असुन्दर अथवा कुरूप हो—और दूसरोंके द्वारा आप शक्य भी नहीं हैं—कोई भी आपको अभिभूत या पराजित नहीं कर सकता। इसीसे शरीर-शृङ्गाररूप आभूषणों, वस्त्रों तथा पुष्पमालाओं आदिसे आपका कोई प्रयोजन नहीं है, और न शस्त्रों तथा अस्त्रोंसे ही कोई प्रयोजन है—शृङ्गारादिकी ये सब वस्तुएँ आपके लिये निरर्थक हैं, इसीसे आप इन्हें धारण नहीं करते। वास्तवमें इन्हें वे ही लोग अपनाते हैं जो स्वरूपसे ही असुन्दर होते हैं अथवा कमसे कम अपनेको यथेष्ट सुन्दर नहीं समझते और जिन्हें दूसरों-द्वारा हानि पहुँचने तथा पराजित होने आदिका महाभय लगा रहता है, और इसलिये वे इन आभूषणादिके द्वारा अपने कुरूप-को छिपाने तथा अपने सौन्दर्यमें कुछ वृद्धि करनेका उपक्रम किया करते हैं, और इसी तरह शस्त्राऽस्त्रोंके द्वारा दूसरोंपर अपना आतङ्क जमाने तथा दूसरोंके आक्रमणसे अपनी रक्षा करनेका प्रयत्न भी किया करते हैं।'

४

परमसाधु-मुख-मुद्रा

अताम्रनयनोत्पलं सकलकोपवन्हेर्जयात्
कटाक्षशरमोक्षहीनमविकारतोद्रेकतः ।
विषाद-मद-हानितः प्रहसितायमानं सदा
मुखं कथयतीव ते हृदय-शुद्धिमात्यन्तिकीम् ॥

—चैत्यभक्ति

'(हे परमसाधु जिनेन्द्र !) आपका मुख, संपूर्ण कोप-वन्हिपर विजय प्राप्त होनेसे—अनन्तानुबन्ध्यादि-भेद-भिन्न समस्त क्रोध-रूप अग्निका क्षय हो जानेसे—, अताम्रनयनोत्पल है—उसमें स्थित दोनों नयन-कमल-दल सदा अताम्र रहते हैं, उनमें कभी क्रोधसूचिका-सुर्खी नहीं आती; और अविकारताके उद्रेकसे—वीत-रागताकी आपमें परमप्रकर्षको प्राप्ति होनेसे—कटाक्षबाणोंके मोचन-व्यापारसे रहित है—कामोद्रेकादिके वशीभूत होकर तिर्यग्दृष्टिपातरूप कटाक्षबाणोंको छोड़ने जैसी कोई क्रिया नहीं करता है। साथ ही, विषाद और मदकी सर्वथा हानि हो जानेसे—उनका अस्तित्व ही आपके आत्मामें न रहनेसे—सदा ही प्रहसितायमान रहता है—प्रहसित—प्रफुल्लितकी तरह आचरण करता हुआ निरन्तर ही प्रसन्न बना रहता है। इन तीन विशेषणोंसे विशिष्ट आपकी मुख-मुद्रा आपकी आत्यन्तिकी—अविनाशी—हृदयशुद्धिका द्योतन करती है। भावार्थ—हृदयको

अशुद्ध करनेवाले क्रोध, कामादिविकार, मद और विषाद हैं, ये जिनके नष्ट होजाते हैं उनका मुख उक्त तीनों—अताम्रनयनोत्पलत्व, कटाक्षशरमोक्षहीनत्व, सदाप्रहसितायमानत्व—विशेषणोंसे विशिष्ट हो जाता है। जिनेन्द्रका मुख चूँकि इन तीनों विशेषणोंसे विभूषित है इसलिये वह उनके हृदयकी उस शाश्वती 'शुद्धि'को स्पष्ट घोषित करता है जो काम, क्रोध, मद और विषादादिका सर्वथा अभाव हो जानेसे सम्पन्न होती है। हृदयशुद्धिकी इस कसौटी अथवा माप-दण्डसे दूसरोंके हृदयकी शुद्धिका भी कितना ही अन्दाज़ा और पता लगाया जा सकता है।'

५

सत्साधु-वन्दन

जियभय-जियउवसग्गे जियइंदिय-परिसहे जियकसाए।
जियराय-दोस-मोहे जियसुह-दुक्खे णमंसामि॥

—योगिभक्तौ, श्रीकुन्दकुन्दाचार्यः

'जिन्होंने भयोंको जीत लिया—जो इस लोक, परलोक तथा आकस्मिकादि किसी भी प्रकारके भयके वशवर्ती होकर अपने पदसे, कर्तव्यसे, व्रतोंसे, न्याय्य-नियमोंसे च्युत नहीं होते, न अन्याय-अत्याचार तथा पर-पीडनमें प्रवृत्त होते हैं और न किसी तरहकी दीनता ही प्रदर्शित करते हैं। जिन्होंने उपसर्गोंको जीत लिया—जो चेतन-अचेतन-कृत उपसर्गों-उपद्रवोंके उपस्थित

होनेपर समताभाव धारण करते हैं, अपने चित्तको कलुषित अथवा शत्रुतादिके भावरूप परिणत नहीं होने देते। जिन्होंने इन्द्रियोंको जीत लिया—जो स्पर्शनादि पंचेन्द्रिय-विषयोंके वशीभूत (गुलाम) न होकर उन्हें स्वाधीन किए हुए हैं। जिन्होंने परीषहोंको जीत लिया—जो भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी, विष-कण्टक, वध-बन्धन, अलाभ और रोगादिककी परीषहों—बाधाओंको सम-भावसे सह चुके हैं। जिन्होंने कषायोंको जीत लिया—जो क्रोध, मान, माया, लोभ तथा हास्य, शोक और कामादिकसे अभिभूत होकर कोई काम नहीं करते। जिन्होंने राग, द्वेष और मोहपर विजय प्राप्त किया है—जो राग, द्वेष, मोहकी अधीनता छोड़कर स्वाधीन बने हैं। और जिन्होंने सुख-दुःखको भी जीत लिया है—सुखके उपस्थित होनेपर जो हर्ष नहीं मनाते और न दुःखके उपस्थित होनेपर चित्तमें किसी प्रकारका उद्वेग, संक्लेश अथवा विकार ही लाते हैं। उन सभी सत्साधुओंको मैं नमस्कार करता हूँ—उनकी वन्दना—उपासना—आराधना करता हूँ; फिर वे चाहे कोई भी, कहीं भी और किसी नामसे भी क्यों न हों।

श्रीवीर-वर्द्धमान-स्मरण

१ वीर-जिन-वन्दन

शुद्धि-शक्त्योः परां काष्ठां योऽवाप्य शान्तिमुत्तमाम् ।
देशयामास सद्धर्मं तं वीरं प्रणमाम्यहम् ॥

—युगवीरः

'जिन्होंने, ज्ञानावरण और दर्शनावरणके विनाशसे निर्मल ज्ञानदर्शनकी आविर्भूतिरूप शुद्धिकी तथा अन्तराय कर्मके क्षयसे वीर्यलब्धिरूप शक्तिकी पराकाष्ठाको—उत्कृष्ट अवस्था अथवा चरम-सीमाको—प्राप्त करके और मोहनीय कर्मके समूल विध्वंससे आत्मामें प्रशमसुख-स्वरूप उत्तमशान्तिकी प्राप्ति करके, समीचीन धर्मकी देशना की है उन श्रीवीर भगवान्‌को मैं प्रणाम करता हूँ—गुणानुरागपूर्वक उनके सामने नत-मस्तक होता हूँ ।

नमः श्रीवर्द्धमानाय निर्धूत-कलिलात्मने ।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते ॥

—रत्नकरण्डश्रावकाचारे, श्रीसमन्तभद्रः

'जिनकी विद्या—केवलज्ञान-ज्योति—अलोक-सहित तीनों लोकोंके लिये दर्पणकी तरह आचरण करती है—उन्हें अपनेमें स्पष्टरूपसे प्रतिबिम्बित करती है । अर्थात् जिनके केवल-ज्ञानमें अलोक-सहित तीनों लोकके सभी पदार्थ साक्षात् रूपसे प्रतिभासित

होते हैं और अपने इस प्रतिभास-द्वारा ज्ञान-स्वरूप आत्मामें कोई विकार उत्पन्न नहीं करते—वह दर्पणकी तरह निर्विकार बना रहता है, उन निर्धूत-कलिलात्मा—अपने आत्मासे राग-द्वेष काम-क्रोधादिरूप सकल पाप-मलको धोकर उसे पूर्ण निर्मल एवं निर्विकार बनानेवाले—श्रीमान् वर्द्धमानको—भारतीविभूति अथवा आर्हन्त्य-लक्ष्मीरूप श्रीसे सम्पन्न अन्तिम जैन तीर्थंकर श्रीवीर भगवान्को—मेरा नमस्कार हो—मैं उनके गुणोत्कर्षके आगे नम्र होकर सिर झुकाता हूँ।'

सद्दृष्टि-ज्ञान-वृत्तात्मा मोक्ष-मार्गः सनातनः।
आविरासीद्यतो वन्दे तमहं वीरमच्युतम् ॥

—तत्त्वार्थसूत्रे, श्रीप्रभाचन्द्रः

'सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्ररूप सनातन मोक्षमार्ग जिनसे—जिनके उपदेशसे—आविर्भूत हुआ—लोकमें पुनः प्रकट हुआ—उन अच्युत (अमर-अविनाशी) वीरकी मैं वन्दना करता हूँ—उन्हें अपना मार्गदर्शक आदर्श-पुरुष मानकर उनके सामने नत-मस्तक होता हूँ।'

२ वीर-जिन-स्तवन—

कीर्त्या महत्या भुवि वर्द्धमानं त्वां वर्द्धमानं स्तुति-गोचरत्वम्।
निनीषवः स्मो वयमद्य वीरं विशीर्ण-दोषाऽऽशय-पाश-बन्धम्॥

—युक्त्यनुशासने, श्रीसमन्तभद्रः

'हे वीर जिन! —इस युगके अन्तिम तीर्थप्रवर्तक परमदेव! आप दोषों और दोषाऽऽशयोंके पाश-बन्धनसे विमुक्त हुए हैं—

आपने अज्ञान-अदर्शन-राग-द्वेष-काम-क्रोधादि विकारों अर्थात् विभाव परिणामरूप भावकर्मों और इन दोषात्मक भावकर्मों-के संस्कारक कारणों अर्थात् ज्ञानावरण-दर्शनावरण-मोहनीय-अन्तरायरूप द्रव्यकर्मोंके जालको छिन्न-भिन्न कर स्वतन्त्रता प्राप्त की है—; आप निश्चितरूपसे ऋद्धमान (प्रवृद्ध-प्रमाण) हैं—आपका तत्त्वज्ञानरूप प्रमाण (केवलज्ञान) स्याद्वाद-नयसे संस्कृत होनेके कारण प्रवृद्ध है—सर्वोत्कृष्ट एवं अबाध्य है, और आप महती कीर्तिसे भूमण्डलपर वर्द्धमान हैं—जीवादि-तत्त्वार्थोंका कीर्तन (सम्यग्वर्णन) करनेवाली युक्ति-शास्त्राऽवि-रोधिनी दिव्य-वाणीसे साक्षात् समवसरण-भूमिपर तथा परम्परा-से परमागमकी विषयभूत सारी पृथ्वीपर छोटे-बड़े, ऊँच-नीच, निकटवर्ती-दूरवर्ती, तत्कालीन और उत्तरकालीन सभी पर-अपर परीक्षकजनोंके मनोंको संशयादिके निरसन-द्वारा पुष्ट एवं व्याप्त करते हुए आप वृद्धि (व्यापकता) को प्राप्त हुए हैं—सदा सर्वत्र और सबोंके लिये 'युक्ति-शास्त्राऽविरोधि-वाक्' के रूपमें अवस्थित हैं, यह बात परीक्षा-द्वारा सिद्ध हो चुकी है। (अतः) अब—परी-क्षाऽवसानके समय—(आत्ममीमांसाद्वारा) युक्ति-शास्त्राऽविरोधि-वाक्त्व-हेतुसे परीक्षा करके यह निर्णय कर चुकनेपर कि आप विशीर्ण-दोषाशय-पाश-बन्धत्वादि तीन असाधारण गुणों (कर्म-भेत्तृत्व, सर्वज्ञत्व, परमहितोपदेशकत्व) से विशिष्ट हैं—आपको स्तुतिगोचर—स्तुतिका विषयभूत आप्तपुरुष—मानकर, हम—परीक्षाप्रधानी मुमुक्षुजन—आपको अपनी स्तुतिका विषय बनाना चाहते हैं—आपकी स्तुति करनेमें प्रवृत्त होना चाहते हैं।'*

---

* इसके अनन्तर ही 'युक्त्यनुशासन' ग्रंथमें स्वामी समन्तभद्रने वीर-

अनन्तविज्ञानमतीत-दोषमबाध्य-सिद्धान्तममर्त्य-पूज्यम् ।
श्रीवर्द्धमानं जिनमाप्तमुख्यं स्वम्भुवं स्तोतुमहं यतिष्ये ॥

—अन्ययोगव्यवच्छेदिकायां, श्रीहेमचन्द्रः

'जो अनन्त-विज्ञान-स्वरूप हैं, दोषोंसे—राग-द्वेष-काम-क्रोधादि विकारोंसे—रहित हैं, जिनका सिद्धान्त (आगम) अबाध्य है—वादी प्रतिवादीके द्वारा अखण्डनीय है—, जो देवोंसे पूज्य हैं और स्वयम्भू हैं—स्वयं ही विना किसी दूसरेके उपदेशके मोक्ष-मार्गको जानकर तथा उसका अनुष्ठान कर आत्म-विकासको प्राप्त हुए हैं—उन आप्त-पुरुषोंमें मुख्य श्रीवर्द्धमान जिनेन्द्रके स्तवनका मैं यत्न करता हूँ।'

स्थेयाज्ञातजयध्वजाऽप्रतिनिधिः प्रोद्भूतभूरिप्रभुः
प्रध्वस्ताऽखिल-दुर्नय-द्विषदिभः सन्नीतिसामर्थ्यतः ।
सन्मार्गस्त्रिविधः कुमार्ग-मथनोऽर्हन्वीरनाथः श्रिये
शश्वत्संस्तुति-गोचरोऽनघधियां श्रीसत्यवाक्याधिपः ॥

—युक्त्यनुशासन-टीकायां, श्रीविद्यानन्दः

'जो जयध्वज प्राप्त करनेवालोंमें अद्वितीय हैं; जिनके महान् सामर्थ्य अथवा महती प्रभुताका प्रादुर्भाव हुआ है; जिन्होंने सन्नीतिकी—अनेकान्तमय स्याद्वाद-नीतिकी—सामर्थ्यसे संपूर्ण दुर्नयरूप शत्रुगजोंको ध्वस्त (विनष्ट) कर दिया है; जो त्रिविध-

---

प्रभु और उनके शासनका वैशिष्ट्य स्थापन करनेवाली अपूर्व स्तुति की है। यह ग्रन्थ 'समन्तभद्रभारती' नामका जो महान् ग्रन्थ वीरसेवामन्दिरसे प्रकाशित होनेवाला है उसमें सानुवाद प्रकट होगा।

सन्मार्ग-स्वरूप हैं — सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्रकी साक्षात् मूर्ति हैं—; जिन्होंने कुमार्गोंको मथन कर डाला है; जो सदा कलुषित-आशयसे रहित सुधीजनोंकी संस्तुतिका विषय बने हुए हैं और श्रीसम्पन्न-सत्यवाक्योंके अधिपति अथवा आगमके स्वामी हैं, वे अर्हन्त भगवान् श्रीवीर प्रभु कल्याणके लिये स्थिर रहें—चिरकाल तक लोक-हृदयोंमें निवास करें।'

३ वीर-शासनाभिनन्दन—

तव जिन शासन-विभवो
जयति कलावपि गुणाऽनुशासन-विभवः।
दोष-कशाऽसनविभवः
स्तुवन्ति चैनं प्रभा-कृशाऽऽसनविभवः ॥

—स्वयम्भूस्तोत्रे, श्रीसमन्तभद्रः

'(हे वीर जिन !) आपका शासन-माहात्म्य—आपके प्रवचनका यथावस्थित पदार्थोंके प्रतिपादन-स्वरूप गौरव—कलिकालमें भी जयको प्राप्त है—सर्वोत्कृष्टरूपसे वर्त रहा है—, उसके प्रभावसे गुणोंमें अनुशासन-प्राप्त शिष्यजनोंका भव विनष्ट हुआ है—संसार-परिभ्रमण सदाके लिये छूटा है—इतना ही नहीं, किन्तु जो दोषरूप चाबुकोंका निराकरण करनेमें समर्थ हैं—चाबुककी तरह पीड़ाकारी काम-क्रोधादि दोषोंको अपने पास फटकने नहीं देते—और अपने ज्ञानादि तेजसे जिन्होंने आसन-विभुओंको—लोकके प्रसिद्ध नायकों(हरि-हरादिकों) को—निस्तेज किया है वे—गणधर-देवादि महात्मा—भी आपके इस शासन-माहात्म्यकी स्तुति करते हैं।'

दया-दम-त्याग-समाधिनिष्ठं नय-प्रमाण-प्रकृताञ्जसार्थम् ।
अधृष्यमन्यैरखिलैः प्रवादैर्जिन त्वदीयं मतमद्वितीयम् ॥

युक्त्यनुशासने, श्रीसमन्तभद्रः

'हे वीर जिन! आपका मत—शासन—नय-प्रमाणके द्वारा वस्तु-तत्त्वको बिल्कुल स्पष्ट करनेवाला और सम्पूर्ण प्रवादियोंसे अबाध्य होनेके साथ साथ दया (अहिंसा), दम (संयम), त्याग और समाधि (प्रशस्त ध्यान) इन चारोंकी तत्परताको लिये हुए है। यही सब उसकी विशेषता है, और इसीलिये वह अद्वितीय है।'

सर्वान्तवत्तद्गुण-मुख्य-कल्पं सर्वान्तशून्यं च मिथोऽनपेक्षम् ।
सर्वापदामन्तकरं निरन्तं सर्वोदयं तीर्थमिदं तवैव ॥

—युक्त्यनुशासने, श्रीसमन्तभद्रः

'हे वीर प्रभु! आपका प्रवचनतीर्थ—शासन—सर्वान्तवान् है—सामान्य, विशेष, द्रव्य, पर्याय, विधि, निषेध, एक, अनेक, आदि अशेष धर्मोंको लिये हुए है—और वह गुण-मुख्यकी कल्पनाको साथमें लिये हुए होनेसे सुव्यवस्थित है—उसमें असंगतता अथवा विरोधके लिये कोई अवकाश नहीं है—जो धर्मोंमें परस्पर अपेक्षाको नहीं मानते—उन्हें सर्वथा निरपेक्ष बतलाते हैं—उनके शासनमें किसी भी धर्मका अस्तित्व नहीं बन सकता और न पदार्थ-व्यवस्था ही ठीक बैठ सकती है। अतः आपका ही यह शासनतीर्थ सर्वदुःखोंका अन्त करनेवाला है, यही निरन्त है—किसी भी मिथ्यादर्शनके द्वारा खण्डनीय नहीं है—और यही सब प्राणियोंके अभ्युदयका कारण तथा आत्माके पूर्ण अभ्युदय

(विकास) का साधक ऐसा 'सर्वोदयतीर्थ' है। भावार्थ—आपका शासन अनेकान्तके प्रभावसे सकल दुर्नयों (परस्पर-निरपेक्ष नयों) अथवा मिथ्यादर्शनोंका अन्त (निरसन) करनेवाला है और ये दुर्नय अथवा सर्वथा एकान्तवादरूप मिथ्यादर्शन ही संसारमें अनेक शारीरिक तथा मानसिक दुःखरूप आपदाओंके कारण होते हैं, इसलिये इन दुर्नयरूप मिथ्यादर्शनोंका अन्त करनेवाला होनेसे आपका शासन समस्त आपदाओंका अन्त करनेवाला है, अर्थात् जो लोग आपके शासनतीर्थका आश्रय लेते हैं—उसे पूर्ण-तया अपनाते हैं—उनके मिथ्यादर्शनादि दूर होकर समस्त दुःख मिट जाते हैं। और वे अपना पूर्ण अभ्युदय (उत्कर्ष एवं विकास) सिद्ध करनेमें समर्थ हो जाते हैं।'

कामं द्विषन्नप्युपपत्तिचक्षुः समीक्षतां ते समदृष्टिरिष्टम्।
त्वयि ध्रुवं खण्डितमानशृङ्गो भवत्यभद्रोऽपि समन्तभद्रः॥

—युक्त्यनुशासने, श्रीसमन्तभद्रः

'(हे वीर भगवन्!) आपके इष्ट-शासनसे भरपेट अथवा यथेष्ट द्वेष रखनेवाला मनुष्य भी यदि समदृष्टि (मध्यस्थवृत्ति) हुआ उपपत्तिचक्षुसे—मात्सर्यके त्यागपूर्वक युक्तिसंगत समाधानकी दृष्टिसे—आपके इष्टका—शासनका—अवलोकन और परीक्षण करता है तो अवश्य ही उसका मानशृङ्ग खण्डित हो जाता है—सर्वथा एकान्तरूप मिथ्यामतका आग्रह छूट जाता है—और वह अभद्र अथवा मिथ्यादृष्टि होता हुआ भी सब ओरसे भद्ररूप एवं सम्यग्दृष्टि बन जाता है—अथवा यों कहिये कि आपके शासन-तीर्थका उपासक और अनुयायी हो जाता है।'

७

श्रीगौतम-गणधर-स्मरण

—:*०*:—

मानस्तम्भं प्रदृष्ट्वा गतनिखिलमदोऽभूच्च यो योगिराजो
वीरस्यान्ते प्रसिद्धः प्रवरगणधरस्त्यक्तसर्वप्रसङ्गः ।
श्रेयोवृष्टिं ततान शुभजन-सुखदां पापताप-प्रणाशां
वंदेऽहं गौतमं तं सकलनृप-नुतं शक्रवृन्द-प्रवन्द्यम् ॥ १ ॥
कर्मारातिं विजित्य व्रतसुभट-चयैः केवलज्ञानमाप्य
श्रीसिद्धान्तं निरूप्य नर-नृपति-गणं सम्प्रबोध्य स्ववाक्यैः।
योऽभून्मुक्तिप्रियेशोऽखिलमलरहितः शुद्धचिद्रूपधारी
श्रेयो वो नः स नित्यं ध्रुवमपि कुरुतां वाञ्छितं देहभाजाम् ॥२॥

—गौतमचरित्रे, श्रीधर्मचन्द्रः

'(श्रीवीरके समवसरणमें) मानस्तम्भको देखकर जिनका सारा मद जाता रहा, जो वीरके समीप सम्पूर्ण परिग्रहका त्याग करके प्रसिद्ध योगिराज और प्रवर (अत्युत्कृष्ट) गणधर हुए, जिन्होंने पाप-तापको शान्त करनेवाली तथा भव्यजनोंको सुखकी देनेवाली कल्याणवृष्टिका विस्तार किया, और जो सकलनृपोंसे स्तुत एवं शक्र-समूहसे प्रवंद्य थे, उन गौतमस्वामीकी मैं वन्दना करता हूँ—उन्हें भक्तिभावपूर्वक प्रणाम करता हूँ।'

'जो व्रतरूप-सुभट-समूहके द्वारा कर्मशत्रुको जीतकर, केवलज्ञानको प्राप्तकर, श्रीसिद्धान्तका—द्वादशाङ्ग-श्रुतका—निरूपण कर

और अपने वचनों द्वारा मनुष्यों तथा राजसमूहको संबोधन कर मुक्ति-रमाके स्वामी हुए हैं वे संपूर्ण कर्ममलसे रहित शुद्धचिद्रूपके धारी श्रीगौतमस्वामी नित्य ही तुम्हारे और हमारे ध्रुव (शाश्वत) कल्याणके कर्ता होवें तथा देहधारियोंकी मनोवांछित सिद्धिमें सहायक बनें—अर्थात् सभी जन उनका सम्यक् आराधन करके अपने इष्ट फल (मोक्ष) को प्राप्त करनेमें समर्थ होवें।'

८

श्रीभद्रबाहु-स्मरण

भद्रबाहुरग्रिमः समग्रबुद्धिसम्पदा
शुद्ध-सिद्ध-शासनं सुशब्द-बन्ध-सुन्दरम्।
इद्ध-वृत्त-सिद्धिरत्र बद्धकर्मभित्तपो-
वृद्धि-वर्द्धित-प्रकीर्तिरुद्दधे महर्द्धिकः॥

यो भद्रबाहुः श्रुतकेवलीनां मुनीश्वराणामिह पश्चिमोऽपि।
अपश्चिमोऽभूद्विदुषां विनेता सर्वश्रुतार्थ-प्रतिपादनेन॥

—श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० १०८

'जो सारी बुद्धि-सम्पत्तिकी प्राप्तिमें अग्रगण्य थे, निर्मल-चारित्रकी सिद्धिको लिये हुए थे, बद्धकर्मोंके भेत्ता थे—आत्मासे कर्मोंके सम्बन्धका विच्छेद करनेवाले थे—और तपकी वृद्धिसे जिनकी लोकमें महती कीर्ति बढ़ी हुई थी, उन महर्द्धिक-महाऋद्धि-धारक—भद्रबाहुने (वीरभगवानके) उस शुद्ध तथा सिद्ध शासन-

को—द्वादशाङ्गश्रुतको—उत्तमरूपसे धारण किया है, जो सुशब्दों-की रचनासे सुन्दर है।'

'श्रुतकेवली मुनीश्वरोंमें अन्तिम होते हुए भी, श्रीभद्रबाहु-स्वामी, संपूर्णश्रुतके अर्थका प्रतिपादन करनेसे, विद्वज्जनोंके प्रथम अग्रनेता हुए हैं—अपने बादके सभी विद्वानोंमें प्रधान हुए हैं।'

निरन्तरानन्त-गतात्मवृत्तिं निरस्त-दुर्बोध-तमोवितानम् ।
श्रीभद्रबाहूष्णकरं विशुद्धं विनंनमीमीहितशात-सिद्ध्यै ॥

—भद्रबाहुचरित्रे, श्रीरत्ननन्दी

'जिनकी आत्मप्रवृत्ति निरन्तर ही अनन्तस्वरूप परमात्माकी ओर रही है—जिन्होंने परमात्मगुणोंकी प्राप्तिके लिये सदा ही कदम बढ़ाया है—और मिथ्याज्ञानरूप अन्धकारके विस्तार (समूह) को दूर किया है उन निर्मलसूर्य श्रीभद्रबाहु-स्वामीको मैं, इच्छित निराकुल सुखकी सिद्धिके लिये, बहुत ही विनम्र होकर नमस्कार करता हूँ।'

६

श्रीगुणधर-स्मरण

जेणिह कसायपाहुडमणेय-णायमुज्जलं अणंतत्थं ।
गाहाहि विवरियं तं गुणहर-भट्टारयं वंदे ॥

—जयधवलायां, श्रीवीरसेनः

'जिन्होंने अनेक नयोंसे युक्त, उज्ज्वल और अनन्त पदार्थोंको लिये हुए कषायप्राभृतको गाथाओंके द्वारा विवृत (व्यक्त) किया है

उन गुणधर-भट्टारकको—पूज्यश्री गुणधराचार्यको—मैं वन्दना करता हूँ—उनके आगे नतमस्तक होता हूँ।'

१०

श्रीधरसेन-स्मरण

पसियउ महु धरसेणो पर-वाइ-गओह-दाण-वर-सीहो।
सिद्धंतामिय-सायर-तरंग-संघाय-धोय-मणो ॥
जयउ धरसेण-णाहो जेण महाकम्म-पयडि-पाहुड-सेलो।
बुद्धिसिरेणुद्धरिओ समप्पिओ पुप्फयंतस्स ॥

—धवलायां, श्रीवीरसेनः

'जो पर-वादीरूप गजसमूहके मदका विनाश करनेके लिये श्रेष्ठ सिंहके समान हैं—जिनके सामने अन्य मतोंके वादीजन उसी प्रकार गलित-मद एवं निस्तेज हो जाते हैं जिस प्रकार कि केशरी सिंहके सामने मद झरते हुए हाथी निर्मद और निष्प्रभ हो जाते हैं—और सिद्धान्त-आगमरूप अपरिमित सागरकी 'तरंगों'के समूहसे जिनका मन धोया हुआ है—धुलकर निर्मल बना हुआ है—वे श्रीधरसेन आचार्य मुझपर प्रसन्न होवें—मैं प्रसन्नतापूर्वक उनका आराधन करनेमें समर्थ होऊँ।

'जिन्होंने 'महाकर्मप्रकृति-प्राभृतरूप पर्वतको बुद्धि-शिरासे उद्धृत किया है—बुद्धिप्रवाहसे उखाड़ा है—और उसे पुष्पदन्तको समर्पित किया है, वे श्रीधरसेनस्वामी जयवन्त हों—सदा लोक-हृदयोंमें विराजित रहें।'

१२

श्रीपुष्पदन्त-स्मरण

पणमामि पुप्फदंतं दुकयंतं दुण्णयंधयार-रविं ।
भग्गसिव-मग्ग-कंटयमिसि-समिइ-वइं सया दंतं ।।

—धवलायां, श्रीवीरसेनः

'जो दुष्कृतों–पापोंका अन्त करनेवाले हैं, दुर्नयरूप अन्धकारको दूर करनेके लिये सूर्यसमान हैं, जिन्होंने शिवमार्गके कण्टकों–मोक्षपथके बाधककारणोंको नष्ट किया है, जो ऋषियोंकी समिति (सभा) के स्वामी थे और सदा ही दमनशील थे—पंचेन्द्रियोंको अपने वशमें रखनेवाले थे, उन श्रीपुष्पदन्त आचार्यको मैं प्रणाम करता हूँ।'

१३

श्रीभूतबलि-स्मरण

पणमह कय-भूय-बलिं भूयबलिं केस-वास-परिभूय-वलिं ।
विणिहय-बम्मह-पसरं वड्ढाविय-विमल-णाण-बम्मह-पसरं ।।

—धवलायां, श्रीवीरसेनः

'जो भूतों–सर्वप्राणियों अथवा व्यन्तर जातिके भूत नामक देवोंसे पूजे गये हैं, जिन्होंने अपने केशपाशसे—बालोंकी सुन्दर

स्थितिसे--जरासे होनेवाली शिथिलताको तिरस्कृत किया है, अब्रह्म (कामदेव) के प्रसारको नष्ट कर दिया है और निर्मलज्ञानके द्वारा ब्रह्मचर्यके प्रसारको बढ़ाया है, उन श्रीभूतबलि आचार्यको प्रणाम करो—वे सभीके प्रणाम-योग्य हैं।'

१४
श्रीकुन्दकुन्द-स्मरण

—*०::०*—

वन्द्यो विभुर्भुवि न कैरिह कौण्डकुन्दः
कुन्द-प्रभा-प्रणयि-कीर्ति-विभूषिताशः ।
यश्चारुचारण-कराम्बुज-चञ्चरीक-
श्चक्रे श्रुतस्य भरते प्रयतः प्रतिष्ठाम् ॥

—श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० ५४

'जिनकी कुन्द-कुसुमकी प्रभाके समान शुभ्र एवं प्रिय कीर्तिसे दिशाएँ विभूषित हैं—सब दिशाओंमें जिनका उज्ज्वल और मनोमोहक यश फैला हुआ है—, जो प्रशस्त चारणोंके—चारण-ऋद्धिधारक महामुनियोंके—करकमलोंके भ्रमर हैं और जिन्होंने भरतक्षेत्रमें श्रुतकी—आगम-शास्त्रकी—प्रतिष्ठा की है, वे पवित्रात्मा स्वामी कुन्दकुन्द इस पृथ्वीपर किनसे वन्दनीय नहीं हैं?—सभीके द्वारा वन्दना किये जानेके योग्य हैं।'

तस्यान्वये भूविदिते बभूव यः पद्मनन्दि-प्रथमाभिधानः ।
श्रीकोण्डकुन्दादि-मुनीश्वराख्यस्सत्संयमादुद्गत-चारणर्द्धिः ॥

—श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० ४०

'उन (श्रीचन्द्रगुप्त मुनिराज) के प्रसिद्ध वंशमें वे श्रीकुन्द-कुन्द मुनीश्वर हुए हैं जिनका पहला—दीक्षा-समयका—नाम 'पद्मनन्दी' था और जिन्हें सत्संयमके प्रसादसे चारण-ऋद्धिकी—पृथ्वीपर पैर न रखते हुए स्वेच्छासे आकाशमें चलनेकी शक्ति-की—प्राप्ति हुई थी।'

रजोभिरस्पृष्टतमत्वमन्तर्बाह्येऽपि संव्यञ्जयितुं यतीशः।
रजःपदं भूमितलं विहाय चचार मन्ये चतुरंगुलं सः॥

—श्रवणबेल्गोल शिलालेख नं० १०५

'योगिराज (श्रीकुन्दकुन्द) रजःस्थान पृथ्वी-तलको छोड़कर जो चार अंगुल ऊपर आकाशमें गमन करते थे उसके द्वारा, मैं समझता हूँ, वे इस बातको व्यक्त करते थे कि वे अन्तरङ्गके साथ साथ बाह्यमें भी रजसे अत्यन्त अस्पृष्ट हैं—अन्तरङ्गमें रागादिक-मल जिस प्रकार उनके पास नहीं फटकते उसी प्रकार बाह्यमें पृथ्वीकी धूलि भी उन्हें छू नहीं पाती।'

१५

श्रीउमास्वाति(मि)-स्मरण

—:*०*:—

तत्त्वार्थसूत्र-कर्तारमुमास्वाति-मुनीश्वरम् ।
श्रुतिकेवलिदेशीयं वन्देऽहं गुण-मन्दिरम् ॥

—नगरताल्लुक-शिलालेख नं० ४६

'तत्त्वार्थसूत्रके कर्ता उमास्वाति-मुनीश्वरकी मैं वन्दना करता हूँ—उनके श्रीचरणोंमें नतमस्तक होता हूँ—जो गुणोंके मन्दिर थे और करीब करीब श्रुतकेवली थे।'

श्रीमानुमास्वातिरयं यतीशस्तत्वार्थसूत्रं प्रकटीचकार ।
यन्मुक्तिमार्गाचरणोद्यतानां पाथेयमर्घ्यं भवति प्रजानाम् ॥

—श्रवणबेल्गोल—शिलालेख नं० १०५

'श्रीमान् उमास्वाति वे मुनीन्द्र हैं जिन्होंने उस तत्त्वार्थसूत्रको प्रकट किया है जो कि मुक्तिमार्गपर चलनेको उद्यमी प्रजाजनोंके लिये मूल्यवान पाथेय (कलेवा) के समान है—मोक्षमार्गपर चलनेके लिये कमर कसे हुओंकी आवश्यकताको पूरा करता हुआ उन्हें चलनेमें समर्थ बनानेवाला है।'

अभूदुमास्वातिमुनिः पवित्रे वंशे तदीये सकलार्थवेदी ।
सूत्रीकृतं येन जिनप्रणीतं शास्त्रार्थजातं मुनिपुङ्गवेन ॥
स प्राणिसंरक्षणसावधानो बभार योगी किल गृध्रपक्षान् ।
तदा प्रभृत्येव बुधा यमाहुराचार्यशब्दोत्तरगृध्रपिच्छम् ॥

—श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० १०८

'उन (श्रीकुन्दकुन्दाचार्य) के पवित्र वंशमें वे उमास्वाति मुनि हुए हैं जो संपूर्ण पदार्थोंके जाननेवाले थे, मुनिपुङ्गव थे और जिन्होंने जिनदेव-प्रणीत आगमके संपूर्ण अर्थसमूहकी सूत्ररूपमें रचना की है। वे प्राणियोंकी रक्षामें बड़े सावधान थे और उन्होंने एक बार पीछीके रूपमें गृध्रके परोंको धारण किया था, उस वक्तसे ही बुध-जन उनको 'गृध्रपिच्छाचार्य' कहने लगे थे।'

अतुच्छ-गुण-सम्पातं गृध्रपिच्छं नतोऽस्मि तम्।
पक्षीकुर्वन्ति यं भव्या निर्वाणायोत्पतिष्णवः॥

—पार्श्वनाथचरिते, श्रीवादिराजसूरिः

'जिस प्रकार पक्षी ऊपर आकाशमें उड़नेके लिये अपने पक्षों-परोंका सहारा लेते हैं उसी प्रकार मोक्ष-प्राप्तिके लिये उड़ने--ऊपर उठनेके इच्छुक भव्यजन जिन्हें अपना पक्ष बनाते हैं—जिनके मोक्षशास्त्र (तत्त्वार्थसूत्र) का आश्रय लेते हैं—उन महान् गुणोंके समूह श्रीगृध्रपिच्छाचार्यको मैं नमस्कार करता हूँ।'

तत्त्वार्थसूत्र-कर्त्तारं गृध्रपिच्छोपलक्षितम्।
वन्दे गणीन्द्र-संजातमुमास्वामि-मुनीश्वरम्॥

--तत्त्वार्थ० माहात्म्य

'जो 'तत्त्वार्थसूत्र' के कर्त्ता-रचयिता हैं, गृध्रपिच्छसे उपलक्षित हैं—गृध्रपक्षीके परोंकी पीछी धारण करनेके कारण 'गृध्रपिच्छाचार्य' नामसे नामाङ्कित हैं—और गणधरवंशमें उत्पन्न हुए हैं अथवा गणीन्द्र-श्रीकुन्दकुन्दाचार्यसे उत्पन्न हुए हैं—उनके शिष्योंमें हैं—उन श्रीउमास्वामिमुनिराजकी मैं वन्दना करता हूँ—उनके पुण्यगुणोंका स्मरण करके उनके चरणोंमें सिर झुकाता हूँ।'

१६

स्वामि-समन्तभद्र-स्मरण

१ समन्तभद्र-वन्दन—

तीर्थं सर्वपदार्थ-तत्त्व-विषय-स्याद्वाद-पुण्योदधेः
भव्यानामकलङ्क-भावकृतये प्राभावि काले कलौ ।
येनाचार्यसमन्तभद्र-यतिना तस्मै नमः सन्ततम्
(कृत्वा विव्रियते स्तवो भगवतां देवागमस्तत्कृतिः ॥)

—देवागमभाष्ये, श्रीअकलकदेवः

'जिन्होंने सम्पूर्ण-पदार्थ-तत्त्वोंको अपना विषय करनेवाले स्याद्वादरूपी पुण्योदधि-तीर्थको, इस कलिकालमें, भव्यजीवोंके आन्तरिक मलको दूर करनेके लिये प्रभावित किया है—उसके प्रभावको सर्वत्र व्याप्त किया है—उन आचार्य समन्तभद्रयतिको—सन्मार्गमें यत्नशील योगिराजको—बार बार नमस्कार ।'

भव्यैक-लोकनयनं परिपालयन्तम् ।
स्याद्वाद-वर्त्म परिणौमि समन्तभद्रम् ॥

—अष्टशत्यां, श्रीअकलंकदेवः

'स्याद्वादमार्गके संरक्षक और भव्यजीवोंके लिये अद्वितीय-सूर्य—उनके हृदयान्धकारको दूर करके अन्तःप्रकाश करने तथा सन्मार्ग दिखलानेवाले—श्रीसमन्तभद्रस्वामीको मैं अभिवन्दन करता हूँ ।'

नमः समन्तभद्राय महते कविवेधसे।
यद्वचो वज्रपातेन निर्भिन्नाः कुमताद्रयः ॥

—आदिपुराणे, श्रीजिनसेनाचार्यः

'जो कवियोंको—नये-नये संदर्भ रचनेवालोंको—उत्पन्न करनेवाले महान् विधाता (कवि-ब्रह्मा) हैं—, जिनकी मौलिक रचनाओंको देखकर तथा अभ्यासमें लाकर बहुतसे लोग नई-नई रचना करनेवाले कवि बन गये तथा बनते जाते हैं—और जिनके वचनरूपी वज्रपातसे कुमतरूपी पर्वत खण्ड-खण्ड होगये—उनका कोई विशेष अस्तित्व नहीं रहा—उन स्वामी समन्तभद्रको नमस्कार हो।'

समन्ताद्भुवने भद्रं विश्वलोकोपकारिणी।
यद्वाणी तं प्रवन्दे समन्तभद्रं कवीश्वरम् ॥

—पार्श्वनाथचरिते, भ० सकलकीर्तिः

'जिनकी वाणी—ग्रन्थादिरूप-भारती—संसारमें सब ओरसे मंगलमय-कल्याणरूप है और सारी जनताका उपकार करनेवाली है उन कवियोंके ईश्वर श्रीसमन्तभद्रकी मैं सादर वन्दना करता हूँ।'

वन्दे समन्तभद्रं तं श्रुतसागरपारगम्।
भविष्यसमये योऽत्र तीर्थनाथो भविष्यति ॥

—रामपुराणे, भ० सोमसेनः

'जो श्रुतसागरके पार पहुँच गये हैं—आगमसमुद्रकी कोई बात जिनसे छिपी नहीं रही—और जो आगेको यहाँ—इसी

भूमंडलपर—तीर्थंकर होंगे, उन श्रीसमन्तभद्रको मेरा अभिवन्दन है—सादर नमस्कार है।'

समन्तभद्रनामानं मुनिं भाविजिनेश्वरम्।
स्वयम्भूस्तुतिकर्त्तारं भस्मव्याधि-विनाशनम्॥
दिगम्बरं गुणागारं प्रमाणमणिमण्डितम्।
विरागद्वेषवादादिमनेकान्तमतं नुमः॥

—मुनिसुव्रतपुराणे, कविकृष्णदासः

'जो स्वयम्भूस्तोत्रके रचयिता हैं, जिन्होंने भस्मव्याधिका विनाश किया था—अपने भस्मकरोगको बड़ी युक्तिसे शान्त किया था—, जिनके वचनादिकी प्रवृत्ति रागद्वेषसे रहित होती थी, 'अनेकान्त' जिनका मत था, जो प्रमाण-मणिसे मण्डित थे—प्रमाणतारूप-मणियोंका जिनके सिरपर सेहरा बँधा हुआ था—अथवा जिनका अनेकान्तमत प्रमाणमणिसे सुशोभित है और जो भविष्यकालमें जिनेश्वर (तीर्थंकर) होनेवाले हैं, उन गुणोंके भण्डार श्रीसमन्तभद्र नामके दिगम्बर मुनिराजको हम प्रणाम करते हैं।'

२ समन्तभद्र-स्तवन—

समन्तभद्रं सद्बोधं स्तुवे वर-गुणालयम्।
निर्मलं यद्यशष्कान्तं बभूव भुवनत्रयम्॥

—जिनशतकटीकायां, श्रीनरसिंहभट्टः

'जो सद्‌बोध-स्वरूप थे—सम्यग्ज्ञानकी मूर्ति थे—, श्रेष्ठ गुणोंके आवास थे—उत्तमगुणोंने जिन्हें अपना आश्रयस्थान बनाया था—

और जिनकी यशःकान्तिसे तीनों लोक अथवा भारतके उत्तर, दक्षिण और मध्य ये तीनों विभाग कान्तिमान थे—जिनका यशस्तेज सर्वत्र फैला हुआ था—उन स्वामी समन्तभद्रका मैं स्तवन करता हूँ।'

समन्तभद्रो भद्रार्थो भातु भारतभूषणः।
देवागमेन येनाऽत्र व्यक्तो देवागमः कृतः॥

—पाण्डवपुराणे, भ० शुभचन्द्रः

'जिन्होंने 'देवागम' नामक अपने प्रवचनके द्वारा देवागमको—जिनेन्द्रदेवके आगमको—इस लोकमें व्यक्त कर दिया है, वे 'भारतभूषण' और एकमात्र भद्र-प्रयोजनके धारक श्रीसमन्तभद्र लोकमें प्रकाशमान होवें—अपनी विद्या और गुणोंके आलोकसे लोगोंके हृदयान्धकारको दूर करनेमें समर्थ होवें।'

यद्भारत्याः कविः सर्वोऽभवत्संज्ञानपारगः।
तं कवि-नायकं स्तौमि समन्तभद्र-योगिनम्॥

—चन्द्रप्रभचरिते, कविदामोदरः

'जिनकी भारतीके प्रतापसे—ज्ञानभाण्डाररूप मौलिक कृतियोंके अभ्याससे—समस्त कविसमूह सम्यग्ज्ञानका पारगामी हो गया, उन कविनायक—नई नई मौलिक रचनाएँ करनेवालोंके शिरोमणि—योगी श्रीसमन्तभद्रको मैं अपनी स्तुतिका विषय बनाता हूँ—वे मेरे स्तुत्य हैं, पूज्य हैं।'

समन्तभद्रस्संस्तुत्यः कस्य न स्यान्मुनीश्वरः।
वाराणसीश्वरस्याग्रे निर्जिता येन विद्विषः॥

—तिरुमकूडलुनरसीपुर-शिलालेख नं० १०५

'जिन्होंने वाराणसी (बनारस) के राजाके सामने विद्वेषियों-को—अनेकान्तात्मक-जैनशासनसे द्वेष रखनेवाले सर्वथा एकान्त-वादियोंको—पराजित कर दिया था, वे समन्तभद्र मुनीश्वर किन-के स्तुतिपात्र नहीं हैं ?—सभीके द्वारा भले प्रकार स्तुति किये जानेके योग्य हैं।'

३ समन्तभद्र-अभिनन्दन—

येनाशेष-कुनीति-वृत्ति-सरितः प्रेक्षावतां शोषिताः
यद्वाचोऽप्यकलंकनीति-रुचिरास्तत्त्वार्थ-सार्थद्युतः।
स श्रीस्वामिसमन्तभद्र-यतिभृद्भूयाद्विभुर्भानुमान्
विद्याऽऽनन्द-घनप्रदोऽनघधियां स्याद्वादमार्गाग्रणीः॥

—अष्टसहस्र्यां, श्रीविद्यानन्दः

'जिन्होंने परीक्षावानोंके लिये सम्पूर्ण कुनीति और कुवृत्ति-रूप-नदियोंको सुखा दिया है, जिनके वचन निर्दोषनीति—स्या-द्वादन्यायको लिये हुए होनेके कारण मनोहर हैं तथा तत्त्वार्थ-समूहके द्योतक हैं वे योगियोंके नायक, स्यद्वादमार्गके नेता, विभु—सामर्थ्यवान्—और भानुमान्—सूर्यके समान देदीप्यमान अथवा तेजस्वी—श्रीसमन्तभद्रस्वामी कलुषित-आशय-रहित प्राणियों-को—सज्जनों अथवा सुधीजनोंको—विद्या और आनन्द-घनके प्रदान करनेवाले होवें—उनके प्रसादसे (प्रसन्नतापूर्वक उन्हें चित्तमें धारण करनेसे) सबोंके हृदयमें शुद्धज्ञान और आनन्दकी वर्षा होवे।'

४ समन्तभद्र-कीर्तन—

कवीनां गमकानां च वादीनां वाग्मिनामपि ।
यशः सामन्तभद्रीयं मूर्ध्नि चूडामणीयते ॥

——आदिपुराणे, श्रीजिनसेनाचार्यः

'श्रीसमन्तभद्रका यश कवियोंके——नये नये सन्दर्भ अथवा नई नई मौलिक रचनाएँ तय्यार करनेमें समर्थ विद्वानोंके—, गमकोंके—दूसरे विद्वानोंकी कृतियोंके मर्म एवं रहस्यको समझने-वाले तथा दूसरोंको समझानेमें प्रवीण व्यक्तियोंके—, विजयकी ओर वचनप्रवृत्ति रखनेवाले वादियोंके, और अपनी वाक्पटुता तथा शब्द-चातुरीसे दूसरोंको रंजायमान करने अथवा अपना प्रेमी बना लेनेमें निपुण ऐसे वाग्मियोंके मस्तकपर चूडा-मणिकी तरह सुशोभित है। अर्थात् स्वामी समन्तभद्रमें कवित्व, गमकत्व, वादित्व और वाग्मित्व नामके चार गुण असाधारण-कोटिकी योग्यताको लिये हुए थे——ये चारों ही शक्तियाँ उनमें ख़ास तौरसे विकासको प्राप्त हुई थीं——और इनके कारण उनका निर्मल यश दूर दूर तक चारों ओर फैल गया था। उस वक्त जितने वादी, वाग्मी, कवि और गमक थे उन सब पर उनके यशकी छाया पड़ी हुई थी—समन्तभद्रका यश चूडामणिके तुल्य सर्वोपरि था—और वह बादको भी बड़े बड़े विद्वानों तथा महान् आचार्योंके द्वारा शिरोधार्य किया गया है।'

समन्तभद्रोऽजनि भद्रमूर्तिस्ततः प्रणेता जिनशासनस्य ।
यदीय-वाग्वज्र-कठोरपातश्चूर्णीचकार प्रतिवादि-शैलान् ॥

—श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० १०८

'(बलाकपिच्छाचार्यके बाद) श्रीसमन्तभद्र 'जिनशासनके प्रणेता' हुए हैं, वे भद्रमूर्ति थे और उनके वचनरूपी वज्रके कठोर-पातसे प्रतिवादी-रूपी पर्वत चूर-चूर हो गये थे—कोई भी प्रतिवादी उनके सामने नहीं ठहरता था।'

समन्तभद्रादिकवीन्द्रभास्वतां स्फुरन्ति यत्राऽमलसूक्तिरश्मयः।
व्रजन्ति खद्योतवदेव हास्यतां न तत्र किं ज्ञानलवोद्धता जनाः॥

—ज्ञानार्णवे, श्रीशुभचन्द्राचार्यः

'श्रीसमन्तभद्र–जैसे कवीन्द्र-सूर्योंकी जहाँ निर्मल सूक्ति-रूप-किरणें स्फुरायमान होरही हैं वहाँ वे लोग खद्योत–जुगनूकी तरह हँसीको ही प्राप्त होते हैं जो थोड़ेसे ज्ञानको पाकर उद्धत हैं—कविता (नूतन सन्दर्भकी रचना) करके गर्व करने लगते हैं।'

५ समन्तभद्र-प्रवचन—

नित्याद्येकान्तगर्तप्रपतनविवशान्प्राणिनोऽनर्थसार्था-
दुद्धर्तुं नेतुमुच्चैः पदममलमलं मंगलानामलंघ्यम्।
स्याद्वाद-न्यायवर्त्म प्रथयदवितथार्थं वचः स्वामिनोऽदः
प्रेक्षावत्त्वात्प्रवृत्तं जयतु विघटिताऽशेषमिथ्याप्रवादम्॥

—अष्टसहस्र्यां, विद्यानन्दाचार्यः

'स्वामी समन्तभद्रका वह निर्दोष प्रवचन जयवन्त हो—अपने प्रभावसे लोकहृदयोंको प्रभावित करे— जो नित्यादि एकान्त गर्तोंमें—वस्तु कूटस्थवत् सर्वथा नित्य ही है अथवा क्षण-क्षणमें निरन्वय विनाशरूप सर्वथा क्षणिक ही है, इस प्रकारकी मान्यतारूपी एकान्त खड्डोंमें—पड़नेके लिये विवश हुए प्राणियोंको

अनर्थ-समूहसे निकालकर मंगलमय उच्चपदको प्राप्त करानेके लिये समर्थ है, स्याद्वाद-न्यायके मार्गको प्रख्यात करनेवाला है, सत्यार्थ है, अलंघ्य है, परीक्षापूर्वक प्रवृत्त हुआ है अथवा प्रेक्षावान्—समीक्ष्यकारी—आचार्यमहोदयके द्वारा जिसकी प्रवृत्ति हुई है और जिसने सम्पूर्ण मिथ्याप्रवादको विघटित—तितर-वितर—कर दिया है।'

विस्तीर्ण-दुर्नयमय-प्रबलान्धकार-
दुर्बोध-तत्त्वमिह वस्तु हितावबद्धम्।
व्यक्तीकृतं भवतु नस्सुचिरं समन्तात्
सामन्तभद्र-वचन-स्फुट-रत्नदीपैः ॥

—न्यायविनिश्चयालंकारे, वादिराजसूरिः

'फैले हुए दुर्नयरूपी प्रबल अन्धकारके कारण जिसका तत्त्व लोकमें दुर्बोध हो रहा है—ठीक समझमें नहीं आता—वह हित-कारी वस्तु—प्रयोजनभूत-जीवादि-पदार्थमाला—श्रीसमन्तभद्रके वचनरूपी देदीप्यमान रत्नदीपकोंके द्वारा हमें सब ओरसे चिरकाल तक स्पष्ट प्रतिभासित होवे—अर्थात् स्वामी समन्तभद्रका प्रवचन उस महाजाज्वल्यमान रत्नसमूहके समान है जिसका प्रकाश अप्रतिहत होता है और जो संसारमें फैले हुए निरपेक्ष नयरूपी महामिथ्यान्धकारको दूर करके वस्तुतत्त्वको स्पष्ट करनेमें समर्थ है, उसे प्राप्त करके हम अपना अज्ञान दूर करें।'

स्यात्कार-मुद्रित-समस्तपदार्थ-पूर्णं
त्रैलोक्य-हर्म्यमखिलं स खलु व्यनक्ति।

दुर्वादुकोक्तितमसा पिहितान्तरालं
सामन्तभद्र-वचन-स्फुट-रत्नदीपः ॥

—श्रवणबेल्गोल-शिलाले० नं० १०५

'श्रीसमन्तभद्रका प्रवचनरूप देदीप्यमान रत्नदीप उस त्रैलोक्यरूप महलको निश्चितरूपसे प्रकाशित करता है जो स्यात्कारमुद्राको लिये हुए समस्तपदार्थोंसे पूर्ण है और जिसके अन्तराल दुर्वादियोंकी उक्तिरूपी अन्धकारसे आच्छादित हैं।'

जीवसिद्धि-विधायीह कृतयुक्त्यनुशासनम्।
वचः समन्तभद्रस्य वीरस्येव विजृम्भते ॥

—हरिवंशपुराणे, श्रीजिनसेनसूरिः

'जीवसिद्धिका विधायक और युक्तियों द्वारा अथवा युक्तियों का अनुशासन करनेवाला—अर्थात् 'जीवसिद्धि' और 'युक्त्यनुशासन' जैसे ग्रन्थोंके प्रणयनरूप—समन्तभद्रका प्रवचन श्रीवीरके प्रवचनकी तरह प्रकाशमान है—अन्तिम तीर्थंकर श्रीमहावीर भगवान्के बीजभूत वचनोंके समकक्ष है और प्रभावादिकमें भी उन्हींके तुल्य है।'

श्रीमत्समन्तभद्रस्य देवस्यापि वचोऽनघम्।
प्राणिनां दुर्लभं यद्वन्मानुषत्वं तथा पुनः ॥

—सिद्धान्तसारसंग्रहे, श्रीनरेन्द्रसेनः

'श्रीसमन्तभद्रदेवका निर्दोष प्रवचन प्राणियोंके लिये ऐसा ही दुर्लभ है जैसा कि मनुष्यत्वका पाना—अर्थात् अनादिकालसे संसारमें परिभ्रमण करते हुए प्राणियोंको जिस प्रकार मनुष्यभवका मिलना दुर्लभ होता है उसी प्रकार समन्तभद्रदेवके प्रवचन-

का लाभ होना भी दुर्लभ है, जिन्हें उसकी प्राप्ति होती है वे निःसन्देह सौभाग्यशाली हैं।'

६ समन्तभद्र-प्रणयन—

समन्तभद्रादिमहाकवीश्वरैः कृतप्रबन्धोज्वल-सत्सरोवरे।
लसद्रसालङ्कृति–नीर-पङ्कजे सरस्वती क्रीडति भाव-बन्धुरे॥

—शृङ्गारचन्द्रिकायां, श्रीविजयवर्णी

'महाकवीश्वर श्रीसमन्तभद्रके द्वारा प्रणयन किये गये प्रबन्ध-समूह (वाङ्मय) रूप उस उज्वल सत्सरोवरमें, जो रसरूप जल तथा अलङ्काररूप कमलोंसे सुशोभित है और जहाँ भावरूप हंस विचरते हैं, सरस्वती क्रीड़ा करती है—अर्थात् स्वामी समन्तभद्रके ग्रन्थ रस तथा अलङ्कारोंसे सुसज्जित हैं, सद्भावोंसे परिपूर्ण हैं और सरस्वती देवीके क्रीडास्थल हैं—विद्यादेवी उनमें विना किसी रोक-टोकके स्वच्छन्द विचरती है अर्थात् वे उसके उपाश्रय हैं। इसीसे महाकवि श्रीवादीभसिंहसूरिने, गद्य-चिन्तामणिमें समन्तभद्रका "सरस्वती-स्वैर-विहारभूमयः" विशेषण-के साथ स्मरण किया है।'

स्वामिनश्चरितं तस्य कस्य नो विस्मयावहम्।
देवागमेन सर्वज्ञो येनाऽद्यापि प्रदर्श्यते॥

—पार्श्वनाथचरिते, श्रीवादिराजसूरिः

'उन स्वामी (समन्तभद्र) का चरित्र किसके लिये विस्मय-कारक—आश्चर्यजनक—नहीं है, जिन्होंने 'देवागम' नामके अपने प्रवचन-द्वारा आज भी सर्वज्ञको प्रदर्शित कर रक्खा है? सभीके

लिये विस्मयकारक है—निःसन्देह समन्तभद्रका 'देवागम' नामका प्रवचन, जैनसाहित्यमें एक अद्वितीय एवं बेजोड़ रचना है और उसके द्वारा सर्वज्ञ ही नहीं किन्तु जिनेन्द्रदेवका आगम भी लोकमें भले प्रकार व्यक्त होरहा है। इसीसे शुभचन्द्राचार्यने, अपने पांडवपुराणमें समन्तभद्रका स्मरण करते हुए, उन्हें "देवागमेन येनाऽत्र व्यक्तो देवागमः कृतः" विशेषणके साथ उल्लेखित किया है।'

त्यागी स एव योगीन्द्रो येनाऽक्षय्यसुखावहः।
अर्थिने भव्यसार्थाय दिष्टो रत्नकरण्डकः॥

—पार्श्वनाथचरिते, श्रीवादिराजसूरिः

'वे ही योगीन्द्र—समन्तभद्र सच्चे त्यागी (दाता) हुए हैं, जिन्होंने सुखार्थी भव्यसमूहके लिये अक्षयसुखका कारण धर्मरत्नोंका पिटारा—'रत्नकरण्डक' नामका धर्मशास्त्र—दान किया है।'

प्रमाण-नय-निर्णीत-वस्तुतत्त्वमबाधितम्।
जीयात्समन्तभद्रस्य स्तोत्रं युक्त्यनुशासनम्॥

—युक्त्यनुशासन-टीकायां, श्रीविद्यानन्दः

'श्रीसमन्तभद्रका 'युक्त्यनुशासन' नामका स्तोत्र जयवन्त हो, जो प्रमाण और नयके द्वारा वस्तुतत्त्वके निर्णयको लिये हुए है और अबाधित है—जिसके निर्णयमें प्रतिवादियोंके द्वारा कोई बाधा नहीं दी जा सकती।'

यस्य च सद्गुणाधारा कृतिरेषा सुपद्मिनी।
जिनशतकनामेति योगिनामपि दुष्करा॥

स्तुतिविद्यां समाश्रित्य कस्य न क्रमते मतिः ।
तद्वृत्तिं येन जाड्ये तु कुरुते वसुनन्द्यपि ॥

—जिनशतकटीकायां, श्रीनरसिंहः

'स्वामी समन्तभद्रकी 'जिनशतक' (स्तुतिविद्या) नामकी रचना, जो कि योगियोंके लिये भी दुष्कर है, सद्गुणोंकी आधार-भूत सुन्दर कमलिनीके समान है—उसके रचना-कौशल, रूप-सौन्दर्य, सौरभ-माधुर्य और भाव-वैचित्र्यको देखते तथा अनुभव करते ही बनता है। उस स्तुति-विद्याका भले प्रकार आश्रय पाकर किसकी बुद्धि स्फूर्तिको प्राप्त नहीं होती ? जब कि जडबुद्धि होते हुए भी वसुनन्दी स्तुतिविद्याके समाश्रयणके प्रभावसे उसकी वृत्ति (टीका) करनेमें समर्थ होता है ।'

यो निःशेष-जिनोक्त-धर्म-विषयः श्रीगौतमाद्यैः* कृतः ।
सूक्तार्थैरमलैः स्तवोऽयमसमः स्वल्पैः प्रसन्नैः पदैः ।
(तद्व्याख्यानमदो यथावगमतः किञ्चित्कृतं लेशतः)
स्थेयांश्चन्द्रदिवाकरावधि बुधप्रह्लादचेतस्यलम् ॥

—स्वयम्भूस्तोत्रटीकायां, श्रीप्रभाचन्द्रः

'श्री समन्तभद्रका 'स्वयम्भूस्तोत्र', जो कि सूक्तरूपमें (भले प्रकार) अर्थका प्रतिपादन करनेवाले निर्दोष, स्वल्प (अल्पाक्षर) एवं प्रसन्न (प्रसादगुणविशिष्ट) पदोंके द्वारा रचा गया है और

---

* यहाँ 'श्रीगौतमाद्यैः' पदका प्रयोग इस आशयको लिये हुए है कि श्रीगौतमस्वामीके स्तोत्रको शुरूमें रखकर दो तीन स्तोत्रों की जो एक साथ टीका की गई है उन सभी स्तोत्रोंसे इसका सम्बन्ध है और जिनमें यह पद्य स्वयम्भूस्तोत्रकी टीकाके अन्तमें दिया है ।

सम्पूर्ण जिनोक्तधर्मको अपना विषय किये हुए है, एक अद्वितीय स्तोत्र है, वह बुधजनोंके प्रसन्नचित्तमें सूर्य-चन्द्रमाकी स्थिति-पर्यन्त स्थित रहे।'

तत्त्वार्थसूत्र-व्याख्यान-गन्धहस्ति-प्रवर्तकः ।
स्वामी समन्तभद्रोऽभूद्देवागमनिदेशकः ॥

—विक्रान्तकौरवे, श्रीहस्तिमल्लः

'स्वामी समन्तभद्र तत्त्वार्थसूत्रके 'गन्धहस्ति' नामक व्याख्यान-के प्रवर्तक (विधायक) हुए हैं और साथ ही देवागमके—'देवागम' नामक ग्रन्थके निर्देशक (प्ररूपक) भी हुए हैं।'

७ समन्तभद्र-वाणी—

प्रज्ञाधीश-प्रपूज्योज्ज्वलगुणनिकरोद्भूतसत्कीर्तिसम्पद्-
विद्यानन्दोदयायाऽनवरतमखिलक्लेशनिर्णाशनाय ।
स्ताद्गौः सामन्तभद्री दिनकररुचिजित्सप्तभंगीविधीद्धा
भावाद्येकान्तचेतस्तिमिरनिरसनी वोऽकलङ्कप्रकाशा ॥

—अष्टसहस्र्यां, श्रीविद्यानन्दाचार्यः

'श्रीस्वामीसमन्तभद्रकी वाणी—वाग्देवी—प्रज्ञाधीशों–बड़े बड़े बुद्धिमानोंके द्वारा प्रपूजित है, उज्ज्वल गुणोंके समूहसे उत्पन्न हुई सत्कीर्तिरूप सम्पत्तिसे युक्त है, अपने तेजसे सूर्यके तेजको जीतनेवाली सप्तभंगी विधिके द्वारा प्रदीप्त है, निर्मल प्रकाशको लिये हुए है और भाव-अभाव आदिके एकान्तपक्षरूपी हृदयान्धकारको दूर करनेवाली है; वह वाणी तुम्हारी विद्या (केवलज्ञान) और आनन्द (अनन्त सुख) के उदयके लिये

निरन्तर कारणीभूत होवे और उसके प्रसादसे तुम्हारे सम्पूर्ण दुःख-क्लेश नाशको प्राप्त हो जावें।'

अद्वैताद्याग्रहोग्रग्रह-गहन-विपन्निग्रहेऽलंघ्यवीर्याः
स्यात्कारामोघमंत्रप्रणयनविधयः शुद्धसद्ध्यानधीराः।
धन्यानामादधाना धृतिमधिवसतां मण्डलं जैनमग्र्यम्
वाचः सामन्तभद्र्यो विदधतु विविधां सिद्धिमुद्भूतमुद्राः॥

—अष्टसहस्र्यां, श्रीविद्यानन्दः

'स्वामी समन्तभद्रकी वाणी—वाकृततिरूप-सरस्वती—अद्वैत-पृथकत्व आदिके एकान्त आग्रहरूपी उग्रग्रह-जन्य गहन विपत्तिको दूर करनेके लिये अलंघ्यवीर्या है—अप्रतिहत-शक्ति है—, स्यात्काररूपी अमोघ मंत्रका प्रणयन करनेवाली है, शुद्ध सद्ध्यान-धीरा है—निर्दोष परीक्षा अथवा सच्ची जाँच-पड़तालके द्वारा स्थिर है—, उद्भूतमुद्रा है—ऊँचे आनन्दको देनेवाली है—, और प्रधान जैनमण्डलके अधिवासी—जैनधर्मके अनुष्ठाता—भव्य पुरुषोंके धैर्यके लिये अवलम्बन-स्वरूप है—जैनधर्ममें उनकी स्थिरताको दृढ़ करनेवाली है—; वह वाणी लोकमें नाना प्रकारकी सिद्धिका विधान करे—उसका आश्रय पाकर लौकिक जन अपना हित सिद्ध करनेमें समर्थ होवें।'

अपेतैकान्तादि-प्रबल-गरलोद्रेक-दलिनी
प्रवृद्धाऽनेकान्ताऽमृतरस-निषेकाऽनवरतम्।
प्रवृत्ता वागेषा सकल-विकलादेश-वशतः
समन्ताद्भद्रं वो दिशतु मुनिपस्याऽमलमतेः॥

—अष्टसहस्र्यां, श्रीविद्यानन्दः

'निर्मलमति श्रीसमन्तभद्र मुनिराजकी वह वाणी, जो अपेक्षा-अनपेक्षा आदिके एकान्तरूप प्रबल गरल (विष) के उद्रेकको दलनेवाली है, निरन्तर अनेकान्तरूपी अमृतरसके सिंचनसे खूब वृद्धिको प्राप्त है और सकलादेशों—प्रमाणों—तथा विकालादेशों—नयों—के आधीन प्रवृत्त हुई है, सब ओरसे तुम्हारे मंगल एवं कल्याणको प्रदान करनेवाली होवे—उसकी एकनिष्ठापूर्वक उपासना एवं तद्रूप आचरणसे तुम्हारे सब तरफ़ भद्रतामय मंगलका प्रसार होवे।'

गुणान्विता निर्मलवृत्तमौक्तिका नरोत्तमैः कण्ठविभूषणीकृता।
न हारयष्टिः परमेव दुर्लभा समन्तभद्रादिभवा च भारती ॥

—चन्द्रप्रभचरिते, श्रीवीरनन्द्याचार्यः

'गुणोंसे—सूतके धागोंसे गूँथी—हुई, निर्मल गोल मोतियोंसे युक्त और उत्तम पुरुषोंके कण्ठका विभूषण बनी हुई हारयष्टिको—मोतियोंकी मालाको—प्राप्त कर लेना उतना कठिन नहीं है जितना कठिन कि समन्तभद्रकी भारती (वाणी) को पा लेना—उसे खूब समझकर हृदयङ्गम कर लेना है, जो कि सद्गुणोंको लिये हुए है, निर्मल वृत्त (वृत्तान्त, चरित्र, आचार, विधान तथा छन्द) रूपी मुक्ताफलोंसे युक्त है और बड़े बड़े आचार्यों तथा विद्वानोंने जिसे अपने कण्ठका आभूषण बनाया है—वे नित्य ही उसका उच्चारण तथा पाठ करनेमें अपना गौरव और अहोभाग्य समझते रहे हैं। अर्थात् स्वामी समन्तभद्रकी वाणी परम दुर्लभ है—उनके सातिशय वचनोंका लाभ बड़े ही भाग्य तथा परिश्रमसे होता है।'

८ समन्तभद्र-भारती—

सास्मरीमि तोष्टवीमि नंनमीमि भारतीं
तंतनीमि पापठीमि बंभणीमि तेमिताम्।
देवराज-नागराज-मर्त्यराजपूजितां
श्रीसमन्तभद्र-वाद-भासुरात्मगोचराम् ॥१॥

'श्रीसमन्तभद्रके वादसे—कथनोपकथनसे—जिसका आत्म-विषय देदीप्यमान है और जो देवेन्द्रों, नागेन्द्रों तथा नरेन्द्रोंसे पूजित है, उस सरसा भारतीका—समन्तभद्रस्वामीकी सरस्वती-का—मैं बड़े आदरके साथ बार बार स्मरण करता हूँ, स्तवन करता हूँ, वन्दन करता हूँ, विस्तार करता हूँ, पाठ करता हूँ और व्याख्यान करता हूँ।'

मातृ-मान-मेय-सिद्धि-वस्तुगोचरां स्तुवे
सप्तभङ्ग-सप्तनीति-गम्यतत्त्वगोचराम्।
मोक्षमार्ग-तद्विपक्ष-भूरिधर्मगोचरा-
माप्ततत्त्वगोचरां समन्तभद्रभारतीम् ॥ २ ॥

'प्रमाता (ज्ञाता) की सिद्धि, प्रमाण (सम्यग्ज्ञान) की सिद्धि और प्रमेय (ज्ञेय) की सिद्धि ये वस्तुएँ जिसकी विषय हैं, जो सप्त भङ्ग और सप्तनयसे जानने योग्य तत्त्वोंको अपना विषय किये हुए है—जिसमें सप्तभंगों तथा सप्तनयोंके द्वारा जीवादि-तत्त्वोंका परिज्ञान कराया गया है—जो मोक्षमार्ग और उसके विपरीत संसार-मार्ग-सम्बन्धी प्रचुर धर्मोंके विवेचनको लिये हुए है और

आप्ततत्त्वविवेचन—आप्तमीमांसा—भी जिसका विषय है, उस समन्तभद्रभारतीका मैं स्तोत्र करता हूँ।'

सूरिसूक्तिवन्दितामुपेयतत्त्वभाषिणीं
चारुकीर्तिभासुरामुपायतत्त्वसाधनीम्।
पूर्वपक्षखण्डनप्रचण्डवाग्विलासनीं
संस्तुवे जगद्धितां समन्तभद्रभारतीम् ॥ ३ ॥

'जो आचार्योंकी सूक्तियोंद्वारा वन्दित है—बड़े बड़े आचार्योंने अपनी प्रभावशालिनी वचनावली-द्वारा जिसकी पूजा-वन्दना की है—, जो उपेयतत्त्वको बतलानेवाली है, उपायतत्त्वकी साधन-स्वरूपा है, पूर्वपक्षका खण्डन करनेके लिये प्रचण्ड वाग्विलासको लिये हुए है—लीलामात्रमें प्रवादियोंके असत्पक्षका खण्डन कर देनेमें प्रवीण है—और जगत्के लिये हितरूप है, उस समन्तभद्र-भारतीका मैं स्तवन करता हूँ।'

पात्रकेसरि-प्रभावसिद्धि-कारिणीं स्तुवे
भाष्यकार-पोषितामलंकृतां मुनीश्वरैः।
गृध्रपिच्छ-भाषित-प्रकृष्ट-मंगलार्थिकां
सिद्धि-सौख्य-साधनीं समन्तभद्रभारतीम् ॥ ४ ॥

'पात्रकेसरीपर प्रभावकी सिद्धिमें जो कारणीभूत हुई—जिसके प्रभावसे पात्रकेसरी-जैसे महान् विद्वान जैनधर्ममें दीक्षित होकर बड़े प्रभावशाली आचार्य बने—, जो भाष्यकार—अकलंकदेव—द्वारा पुष्ट हुई, मुनीश्वरों—विद्यानन्द-जैसे मुनिराजों—द्वारा अलंकृत की गई, गृद्धपिच्छाचार्य (उमास्वाति) के कहे हुए

उत्कृष्ट मंगलके अर्थको लिये हुए है—उसके गम्भीर आशयका प्रतिपादन करनेवाली है—और सिद्धिके—स्वात्मोपलब्धिके—सौख्यको सिद्धि करनेवाली है, उस समन्तभद्र-भारतीको—समन्तभद्रकी आप्तमीमांसादिरूप-कृति-मालाको—मैं अपनी स्तुतिका विषय बनाता हूँ—उसकी भूरि भूरि प्रशंसा करता हूँ।'

इन्द्रभूति-भाषित-प्रमेयजाल-गोचरां
वर्द्धमानदेव-बोध-बुद्ध-चिद्विलासिनीम् ।
योग-सौगतादि-गर्व-पर्वताशनिं स्तुवे
क्षीरवार्धि-सन्निभां समन्तभद्रभारतीम् ॥ ५ ॥

'इन्द्रभूति (गौतम गणधर) का कहा हुआ प्रमेय-समूह जिसका विषय है, जो श्रीवर्द्धमानदेवके बोधसे प्रबुद्ध हुए चैतन्यके विलासको लिये हुए है, यौग तथा बौद्धादि-मतावलम्बियोंके गर्व-रूपी पर्वतके लिए वज्रके समान है और क्षीरसागरके समान उज्ज्वल तथा पवित्र है, उस समन्तभद्रभारतीका मैं कीर्तन करता हूँ—उसकी प्रशंसामें खुला गान करता हूँ।'

मान-नीति-वाक्यसिद्ध-वस्तुधर्म-गोचरां
मानित-प्रभाव-सिद्धसिद्धि-सिद्धसाधनीम् ।
घोर-भूरि-दुःख-वार्धि-तारण-क्षमामिमां
चारु-चेतसा स्तुवे समन्तभद्रभारतीम् ॥ ६ ॥

'प्रमाण, नय तथा आगमके द्वारा सिद्ध हुए वस्तु—धर्म जिसके विषय हैं—जिसमें प्रमाण, नय तथा आगमके द्वारा वस्तु-धर्मोंको सिद्ध किया गया है—, मानित (मान्य) प्रभाववाली

प्रसिद्ध सिद्धि—स्वात्मोपलब्धि—के लिए जो सिद्धसाधनी है—अमोघ उपायस्वरूपा है—और घोर तथा प्रचुर दुःखोंके समुद्र-से पार तारनेके लिये समर्थ है, उस समन्तभद्रभारती की मैं शुद्ध हृदयसे प्रशंसा करता हूँ।'

सान्त-साद्यनाद्यनन्त-मध्ययुक्त-मध्यमां
शून्य-भाव-सर्ववेदि-तत्त्व-सिद्धि-साधनीम् ।
हेत्वहेतुवादसिद्ध-वाक्यजाल-भासुरां
मोक्षसिद्धये स्तुवे समन्तभद्रभारतीम् ॥ ७ ॥

'सादि-सान्त, अनादिसान्त, सादि-अनन्त और अनादि-अनन्त-रूपसे द्रव्य-पर्यायोंका कथन करनेमें जो मध्यस्था है—इनका सर्वथा एकान्त स्वीकार नहीं करती—, शून्य (अभाव)तत्त्व, भावतत्त्व और सर्वज्ञतत्त्वकी सिद्धिमें जो साधनीभूत है और हेतुवाद तथा अहेतुवाद (आगम) से सिद्ध हुए वाक्यसमूहसे प्रकाशमान है—अर्थात् जो युक्ति और आगम-द्वारा सिद्ध हुए वाक्योंसे देदीप्यमान है, उस समन्तभद्रभारतीकी मैं, मोक्षकी सिद्धिके लिए, स्तुति करता हूँ।'

व्यापकद्वयाप्तमार्ग-तत्त्वयुग्म-गोचरां
पापहारि-वाग्विलासि-भूषणांशुकां स्तुवे ।
श्रीकरीं च धीकरीं च सर्वसौख्य-दायिनीं
नागराज-पूजितां समन्तभद्रभारतीम् ॥ ८ ॥

—कविनागराज-विरचित-स० भारतीस्तोत्रम्

व्यापक-व्याप्यका—गुण-गुणीका—ठीक प्रतिपादन करनेवाले

आप्तमार्गके दो तत्त्व—हेयतत्त्व, उपादेयतत्त्व अथवा उपेयतत्त्व और उपायतत्त्व—जिसके विषय हैं, जो पापहरणरूप आभूषण और वाग्विलासरूप वस्त्रको धारण करनेवाली है; साथ ही, श्री-साधिका, बुद्धि-वर्धिका और सर्वसुख-दायिका है, उस नागराज-पूजित समन्तभद्रभारतीकी मैं स्तुति करता हूँ।'

६ समन्तभद्र-शासन—

लक्ष्मीभृत्परमं निरुक्तिनिरतं निर्वाणसौख्यप्रदं
कुज्ञानातपवारणाय विधृतं छत्रं यथा भासुरम्।
संज्ञानैर्नययुक्तिमौक्तिकफलैः संशोभमानं परं
वन्दे तद्धतकालदोषममलं सामन्तभद्रं मतम्॥

—देवागमवृत्तौ, श्रीवसुनन्दिसूरिः

'श्रीसमन्तभद्रके उस निर्दोष मतकी—मैं वन्दना करता हूँ—उसे श्रद्धा और गुणज्ञता-पूर्वक प्रणामाञ्जलि अर्पण करता हूँ—जो श्रीसम्पन्न है, उत्कृष्ट है, निरुक्ति-परायण है—व्युत्पत्ति-विहीन शब्दोंके प्रयोगसे रहित है—, मिथ्याज्ञानरूपी आतापको मिटानेके लिये विधिपूर्वक धारण किये हुए देदीप्यमान छत्रके समान है, सम्यग्ज्ञानों-सुनयों तथा सुयुक्तियोंरूपी मुक्ताफलोंसे परम सुशोभित है, निर्वाण-सौख्यका प्रदाता है और जिसने काल-दोषको ही नष्ट कर दिया था—अर्थात् स्वामी समन्तभद्रमुनिके प्रभावशाली शासनकालमें यह मालूम नहीं होता था कि आजकल कलिकाल बीत रहा है।'

१० समन्तभद्र-माहात्म्य—

वन्द्यो भस्मक-भस्मसात्कृतिपटुः पद्मावतीदेवता-
दत्तोदात्तपद-स्वमंत्रवचन-व्याहूत-चन्द्रप्रभः।
आचार्यस्स समन्तभद्रगणभृद्येनेह काले कलौ
जैनं वर्त्म समन्तभद्रमभवद्भद्रं समन्तान्मुहुः ॥

—श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० ५४ (६७)

'मुनिसङ्घके नायक वे आचार्य समन्तभद्र वन्दना किये जानेके योग्य हैं जो अपनी 'भस्मक' व्याधिको भस्मीभूत करनेमें—बड़ी युक्तिके साथ निर्मूल करनेमें—प्रवीण हुए हैं, पद्मावती नामकी दिव्यशक्तिके प्रभावसे जिन्हें उच्चपदकी प्राप्ति हुई थी, जिन्होंने अपने मंत्ररूप वचनबलसे—योगसामर्थ्यसे—बिम्बरूपमें चन्द्रप्रभ भगवान्को बुला लिया था—अर्थात् चन्द्रप्रभ-बिम्बका आकर्षण (आविर्भाव) किया था—और जिनके द्वारा सर्वहितकारी जैनमार्ग (स्याद्वादमार्ग) इस कलिकालमें पुनः सब ओरसे भद्ररूप हुआ है—उसका प्रभाव सर्वत्र व्याप्त होनेसे वह सबका हित करनेवाला और सबका प्रेमपात्र बना है।'

* श्रीमूलसङ्घ-व्योम्नेन्दुर्भारते भावितीर्थकृद्।
देशे समन्तभद्राख्यो मुनिर्जीयात्पदर्द्धिकः ॥

—विक्रान्तकौरवे, श्रीहस्तिमल्लः

---

* यह पद्य कवि अय्यपार्यके 'जिनेन्द्रकल्याणाभ्युदय'में भी प्रायः ज्योंका त्यों पाया जाता है। उसमें चौथा चरण 'जीयात्प्राप्तपदर्द्धिकः' दिया है।

'श्रीमूलसङ्घरूपी आकाशमें जो चन्द्रमाके समान हुए हैं, भारतदेशमें आगेको तीर्थंकर होनेवाले हैं और जिन्हें चारण ऋद्धिकी प्राप्ति थी—तपके प्रभावसे आकाशमें चलनेकी ऐसी शक्ति उपलब्ध हो गई थी जिसके कारण वे, दूसरे जीवोंको बाधा न पहुँचाते हुए, शीघ्रताके साथ सैंकड़ों कोस चले जाते थे—वे 'समन्तभद्र' नामके मुनिराज जयवन्त हों—उनका प्रभाव स्थायी रूपसे हमारे हृदयपर अङ्कित होवे।'

कुवादिनः स्वकान्तानां निकटे परुषोक्तयः।
समन्तभद्र-यत्यग्रे पाहि पाहीति सूक्तयः॥

—अलङ्कारचिन्तामणौ, श्रीअजितसेनाचार्यः

'(समन्तभद्र-कालमें) प्रायः कुवादीजन अपनी स्त्रियोंके सामने तो कठोर भाषण किया करते थे—उन्हें अपनी गर्वोक्तियाँ अथवा अपनी बहादुरीके गीत सुनाते थे—परन्तु जब योगी समन्तभद्र के सामने आते थे तो मधुरभाषी बन जाते थे और उन्हें 'पाहि पाहि'—रक्षा करो रक्षा करो, अथवा आप ही हमारे रक्षक हैं—ऐसे सुन्दर मृदु-वचन ही कहते बनता था। यह सब स्वामीसमन्तभद्रके असाधारण व्यक्तित्वका प्रभाव था।'

श्रीमत्समन्तभद्राख्ये महावादिनि चागते।
कुवादिनोऽलिखन्भूमिमंगुष्ठैरानताननाः॥

—अलंकारचिन्तामणौ, श्रीअजितसेनः

'जब महावादी श्रीसमन्तभद्र (सभास्थान आदिमें) आते थे तो कुवादीजन नीचा मुख करके अंगूठोंसे पृथ्वी कुरेदने लगते थे—अर्थात् उन लोगोंपर—प्रतिवादियोंपर—समन्तभद्रका इतना

प्रभाव पड़ता था कि वे उन्हें देखते ही विषण्ण-वदन हो जाते और किंकर्तव्यविमूढ बन जाते थे।

*अवट्टुतटमटति झटिति स्फुट-पटु-वाचाट-धूर्जटेर्जिह्वा।
वादिनि समन्तभद्रे स्थितवति का कथाऽन्येषाम् ॥

—अलंकारचिन्तामणौ, विक्रान्तकौरवे च

'वादी समन्तभद्रकी उपस्थितिमें, चतुराईके साथ स्पष्ट शीघ्र और बहुत बोलनेवाले धूर्जटिकी—तन्नामक महाप्रतिवादी विद्वान्की—जिह्वा ही जब शीघ्र अपने बिलमें घुस जाती है—उसे कुछ बोल नहीं आता—तो फिर दूसरे विद्वानोंकी तो कथा ही क्या है? उनका अस्तित्व तो समन्तभद्रके सामने कुछ भी महत्व नहीं रखता।'

---

* यह पद्य शकसम्वत् १०५० में उत्कीर्ण हुए श्रवणबेल्गोलके शिलालेख नं० ५४ (६७) में भी थोड़ेसे परिवर्तनके साथ पाया जाता है। वहाँ 'धूर्जटेर्जिह्वा' के स्थानपर 'धूर्जटेरपि जिह्वा' और 'सति का कथाऽन्येषां' की जगह 'तव सदसि भूप कास्थाऽन्येषां' पाठ दिया है, और इसे समन्तभद्रके वादारंभ-समारंभ-समयकी उक्तियोंमें शामिल किया है। पद्यके उस रूपमें धूर्जटिके निरुत्तर होनेपर अथवा धूर्जटिकी गुरुतर पराजयका उल्लेख करके राजासे पूछा गया है कि 'धूर्जटि जैसे विद्वान्की ऐसी हालत होनेपर अब आपकी सभाके दूसरे विद्वानोंकी क्या आस्था है?—क्या उनमेंसे कोई वाद करनेकी हिम्मत रखता है?'

११ समन्तभद्र-जयघोष—

जीयात्समन्तनद्रोऽसौ भव्य-कैरव-चन्द्रमाः।
दुर्वादि-वाद-कण्डूनां शमनैकमहौषधिः ॥

—हनुमच्चरित्रे, श्रीब्रह्मअजितः

'वे स्वामी समन्तभद्र जयवन्त हों—अपने ज्ञान-तेजसे हमारे हृदयोंको प्रकाशित करें—जो भव्यरूपी कुमुदोंको प्रफुल्लित करनेवाले चन्द्रमा थे और दुर्वादियोंकी वादरूपी खाज (खुजली) को मिटानेके लिये अद्वितीय महौषधि थे—जिन्होंने कुवादियोंकी बढ़ती हुई वादाभिलाषाको ही नष्ट कर दिया था।'

समन्तभद्रस्स चिराय जीयाद्वादीभ-वज्रांकुश-सूक्तिजालः।
यस्य प्रभावात्सकलावनीयं वंध्यास दुर्वादुक-वार्त्तयाऽपि ॥

श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० १०५

'वे स्वामी समन्तभद्र चिरजयी हों—चिरकाल तक हमारे हृदयोंमें सविजय निवास करें—, जिनका सूक्तिसमूह—सुन्दर-प्रौढ युक्तियोंको लिये हुए प्रवचन—वादिरूप-हस्तियोंको वशमें करनेके लिये वज्रांकुशका काम देता है और जिनके प्रभावसे यह सम्पूर्ण पृथ्वी एक बार दुर्वादुकोंकी वार्तासे भी विहीन होगई थी—उनकी कोई बात भी नहीं करता था।'

कार्यादेर्भेद एव स्फुटमिह नियतः सर्वथा कारणादे-
रित्याद्येकान्तवादोद्धततर-मतयः शान्ततामाश्रयन्ति ।

प्रायो यस्योपदेशादविघटितनयान्मानमूलादलंघ्यात्
स्वामी जीयात्स शश्वत्प्रथिततरयतीशोऽकलङ्कोरुकीर्त्तिः ॥

—अष्टसहस्र्यां, श्रीविद्यानन्दाचार्यः

'जिनके नय-प्रमाण-मूलक अलंघ्य उपदेशसे—प्रवचनको सुनकर—महाउद्धतमति वे एकान्तवादी भी प्रायः शान्तताको प्राप्त हो जाते हैं जो कारणसे कार्यादिकका सर्वथा भेद ही नियत मानते हैं अथवा यह स्वीकार करते हैं कि कारण–कार्यादिक सर्वथा अभिन्न ही हैं—एक ही हैं—वे निर्मल तथा विशाल-कीर्तिसे युक्त अतिप्रसिद्ध मुनिराज स्वामी समन्तभद्र सदा जयवन्त रहें—अपने प्रवचन–प्रभावसे बराबर लोक-हृदयोंको प्रभावित करते रहें।'

सरस्वती-स्वैर-विहारभूमयः समन्तभद्रप्रमुखा मुनीश्वराः ।
जयन्ति वाग्वज्र-निपात-पाटित-प्रतीपराद्धान्त-महीध्रकोटयः ॥

—गद्यचिन्तामणौ, श्रीवादीभसिंहाचार्यः

'वे मुनिराज स्वामी समन्तभद्र जयवन्त हैं—सदा ही जयशील हैं, अपने पाठकों तथा अनुचिन्तकोंके अन्तःकरणपर अपना सिक्का जमानेवाले हैं—जो सरस्वतीकी स्वच्छंद विहार-भूमि थे—जिनके हृदय-मन्दिरमें सरस्वती-देवी बिना किसी रोक-टोकके पूरी अज़ादीके साथ विचरती थी, और इसलिये जो असाधारण विद्याके धनी थे और उनमें कवित्व–वाग्मित्वादि शक्तियाँ उच्च-कोटिके विकासको प्राप्त हुई थीं,—और जिनके वचनरूपी वज्रके निपातसे प्रतिपक्षी सिद्धान्तरूप-पर्वतोंकी चोटियाँ खण्ड खण्ड हो गई थीं—अर्थात् समन्तभद्रके आगे बड़े बड़े प्रतिपक्षी सिद्धा-

न्तोंका प्रायः कुछ भी गौरव नहीं रहा था और न उनके प्रतिपादक प्रतिवादीजन ऊँचा मुँह करके ही सामने खड़े हो सकते थे।'

१२ समन्तभद्र-विनिवेदन—

समन्तभद्रादि-महाकवीश्वराः कुवादि-विद्या-जय-लब्ध-कीर्तयः।
सुतर्क-शास्त्रामृतसार-सागरा मयि प्रसीदन्तु कवित्वकांक्षिणि ॥

—वरांगचरित्रे, श्रीवर्धमानसूरिः

'जो समीचीन-तर्कशास्त्ररूप-अमृतके सार-सागर थे और कुवादियों (प्रतिवादियों) की विद्यापर जयलाभ करके यशस्वी हुए थे वे महाकवीश्वर—उत्तमोत्तम नूतन सन्दर्भोंकी रचना करनेवाले—स्वामी समन्तभद्र मुझ कविता-कांक्षीपर प्रसन्न होवें—उनकी विद्या मेरे अन्तःकरणमें स्फुरायमान होकर मुझे सफल-मनोरथ करे, यह मेरा एक विशेष निवेदन है।'

श्रीमत्समन्तभद्रादिकवि-कुञ्जर-सञ्चयम् ।
मुनिवन्द्यं जनानन्दं नमामि वचनश्रियै ॥

—अलंकारचिन्तामणौ, श्रीअजितसेनाचार्यः

'मुनियोंके द्वारा वन्दनीय और जगतजनोंको आनन्दित करनेवाले कविश्रेष्ठ श्रीसमन्तभद्र आचार्यको मैं अपनी 'वचनश्री' के लिये—वचनोंकी शोभा बढ़ाने अथवा उनमें शक्ति उत्पन्न करनेके लिये—नमस्कार करता हूँ—स्वामी समन्तभद्रका यह वन्दन-आराधन मुझे समर्थ लेखक तथा प्रवक्ता बनानेमें समर्थ होवे।'

श्रीमत्समन्तभद्राद्याः काव्य-माणिक्यरोहणाः ।
सन्तु नः संततोत्कृष्टाः सूक्तिरत्नोत्करप्रदाः ॥

—यशोधरचरिते, श्रीवादिराजसूरिः

'जो काव्यों—नूतन सन्दर्भों—रूप-माणिक्यों (रत्नों) की उत्पत्तिके स्थान हैं वे अति उत्कृष्ट श्रीसमन्तभद्रस्वामी हमें सूक्ति-रूपी रत्नसमूहोंको प्रदान करनेवाले होवें—अर्थात् स्वामी समन्तभद्रके आराधन और उनकी भारतीके भले प्रकार अध्ययन और मननके प्रसादसे हम अच्छी अच्छी सुन्दर जँची-तुली रचनाएँ करनेमें समर्थ होवें।'

१३ समन्तभद्र-हृदिस्थापन—

स्वामी समन्तभद्रो मेऽहर्निशं मानसेऽनघः।
तिष्ठताज्जिनराजोद्यच्छासनाम्बुधिचन्द्रमाः ॥

——रत्नमालायां, श्रीशिवकोटिः

'वे निष्कलंक स्वामी समन्तभद्र मेरे हृदयमें दिन-रात स्थित रहें जो जिनराजके—भगवान् महावीरके—ऊँचे उठते हुए शासन-समुद्रको बढ़ानेके लिये चन्द्रमा हैं—अर्थात् जिनके उदयका निमित्त पाकर वीरभगवान्‌का तीर्थ-समुद्र खूब वृद्धिको प्राप्त हुआ है और उसका प्रभाव सर्वत्र फैला है*।'

---

* बेलूर ताल्लुकेके शिलालेख नं० १७ (E. C.,V.) में भी, जो रामानुजाचार्य-मन्दिरके अहातेके अन्दर सौम्य-नायकी—मन्दिरकी छतके एक पत्थरपर उत्कीर्ण है और जिसमें उसके उत्कीर्ण होनेका समय शक सं० १०५९ दिया है, ऐसा उल्लेख पाया जाता है कि श्रुत-केवलियों तथा और भी कुछ आचार्योंके बाद समन्तभद्रस्वामी श्रीवर्धमान महावीरस्वामीके तीर्थकी—जैनमार्गकी—सहस्रगुणी वृद्धि करते हुए उदयको प्राप्त हुए हैं।

१७

श्रीसिद्धसेन-स्मरण

जगत्प्रसिद्धबोधस्य वृषभस्येव निस्तुषाः ।
बोधयन्ति सतां बुद्धिं सिद्धसेनस्य सूक्तयः ॥

—हरिवंशपुराणे, श्रीजिनसेनसूरिः

'श्रीसिद्धसेनाचार्यकी निर्मल सूक्तियाँ (सुन्दर उक्तियाँ) जगत्-प्रसिद्ध बोध (केवलज्ञान) के धारक भगवान् वृषभदेवकी निर्दोष सूक्तियोंकी तरह सत्पुरुषोंकी बुद्धिको बोधित करती हैं—उसे विकसित करती हैं।

प्रवादि-करि-यूथानां केशरी नय-केशरः ।
सिद्धसेनकविर्जीयाद्विकल्प-नखरांकुरः ॥

—आदिपुराणे, श्रीजिनसेनाचार्यः

'जो प्रवादिरूप-हाथियोंके समूहके लिये विकल्परूप-नुकीले नखोंसे युक्त और नयरूप-केशरोंको धारण किये हुए केशरी-सिंह हैं, वे श्रीसिद्धसेन-कवि जयवन्त हों—अपने प्रवचनद्वारा मिथ्यावादियोंके मतोंका निरसन करते हुए, सदा ही लोक हृदयोंमें अपना सिक्का जमाए रक्खें—अपने वचन-प्रभावको अङ्कित किये रहें।'

सदुक्ति-कल्पलतिकां सिञ्चन्तः करुणामृतैः ।
कवयः सिद्धसेनाद्या वर्धयन्तु हृदिस्थिताः ॥

—यशोधरचरिते, श्रीमुनिकल्याणकीर्तिः

'हृदयमें स्थित हुए श्रीसिद्धसेन-जैसे कवि मेरी उक्तिरूपी छोटीसी कल्पलताको करुणाऽमृतसे सींचते हुए उसे वृद्धिगत करें—मैं सिद्धसेन-जैसे महाप्रभावशाली कवियोंको अधिकाधिक-रूपसे हृदयमें धारण करके अपनी वाणीको उत्तरोत्तर पुष्ट और शक्ति-सम्पन्न बनानेमें समर्थ होऊँ।'

१८
श्रीदेवनन्दि-पूज्यपाद-स्मरण

यो देवनन्दि-प्रथमाभिधानो बुद्ध्या महत्या स जिनेन्द्रबुद्धिः।
श्रीपूज्यपादोऽजनि देवताभिर्यत्पूजितं पादयुगं यदीयम् ॥

—श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० ४०

'जिनका प्रथम नाम—गुरुद्वारा दिया हुआ दीक्षानाम—'देवनन्दी' था, जो बादको बुद्धिकी प्रकर्षताके कारण 'जिनेन्द्र-बुद्धि' कहलाए, वे आचार्य 'पूज्यपाद' नामसे इसलिये प्रसिद्ध हुए हैं कि उनके चरणोंकी देवताओंने आकर पूजा की थी।'

श्रीपूज्यपादोद्धृतधर्मराज्यस्ततः सुराधीश्वरपूज्यपादः।
यदीयवैदुष्यगुणानिदानीं वदन्ति शास्त्राणि तदुद्धृतानि ॥
धृतविश्वबुद्धिरयमत्र योगिभिः कृतकृत्यभावमविभ्रदुच्चकैः।
जिनवद्बभूव यदनङ्गचापहृत् स जिनेन्द्रबुद्धिरिति साधु वर्णितः॥

—श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० १०८

'श्रीपूज्यपादने धर्मराज्यका उद्धार किया था—लोकमें धर्मकी पुनः प्रतिष्ठा की थी—इसीसे आप देवताओंके अधिपति-द्वारा पूजे गये और 'पूज्यपाद' कहलाये। आपके पाण्डित्य (विद्वत्ता) पूर्ण गुणोंको आज भी आपके द्वारा उद्धार पाये हुए—रचे हुए—शास्त्र बतला रहे हैं—उनका खुला गान कर रहे हैं। आप जिनेन्द्रकी तरह विश्वबुद्धिके धारक—समस्त शास्त्रविषयोंके पारंगत—थे, कामदेवको जीतनेवाले थे और ऊँचे दर्जेके कृतकृत्यभावको धारण किये हुए थे, इसीसे योगियोंने आपको ठीक ही 'जिनेन्द्रबुद्धि' कहा है।'

श्रीपूज्यपादमुनिरप्रतिमौषधर्द्धि-
र्जीयाद्विदेहजिनदर्शनपूतगात्रः।
यत्पादधौतजल-संस्पर्शप्रभावात्
कालायसं किल तदा कनकीचकार ॥

——श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० १०८

'जो अद्वितीय औषध-ऋद्धिके धारक थे, विदेह-स्थित जिनेन्द्र भगवानके दर्शनसे जिनका गात्र (शरीर) पवित्र होगया था और जिनके चरण-धोए जलके स्पर्शसे एक समय लोहा भी सोना बन गया था, वे श्रीपूज्यपाद मुनि जयवन्त हों—अपने गुणोंसे लोकहृदयोंको वशीभूत करें।'

कवीनां तीर्थकृद्देवः किंतरां तत्र वर्ण्यते।
विदुषां वाङ्मलध्वंसि तीर्थं यस्य वचोमयम् ॥

——आदिपुराणे, श्रीजिनसेनाचार्यः

'जिनका वाङ्मय—शब्दशास्त्ररूप-व्याकरण—तीर्थ विद्वज्जनोंके वचनमलको नष्ट करनेवाला है, वे आचार्य श्रीदेवनन्दी

कवियोंके—नूतन संदर्भ रचनेवालोंके—तीर्थंकर हैं—काव्यतीर्थके विधाता हैं। उनके विषयमें और अधिक क्या कहा जाय ?'

अचिन्त्य-महिमा देवः सोऽभिवन्द्यो हितैषिणा।
शब्दाश्च येन सिद्धयन्ति साधुत्वं प्रतिलम्भिताः ॥

—पार्श्वनाथचरिते, श्रीवादिराजसूरिः

'जिनके द्वारा—जिनके व्याकरणशास्त्रको लेकर—शब्द भले प्रकार सिद्ध होते हैं, वे देवनन्दी अचिन्त्य-महिमा-युक्त देव हैं और अपना हित चाहनेवालोंके द्वारा सदा वन्दना किये जानेके योग्य हैं।'

पूज्यपादः सदा पूज्यपादः पूज्यैः पुनातु माम्।
व्याकरणार्णवो येन तीर्णो विस्तीर्णसद्गुणः ॥

—पाण्डवपुराणे, श्रीशुभचन्द्रसूरिः

'जो पूज्योंके द्वारा भी सदा पूज्यपाद हैं, व्याकरण-समुद्रको तिर गये हैं और विस्तृत सद्गुणोंके धारक हैं, वे श्रीपूज्यपाद आचार्य मुझे सदा पवित्र करें—नित्य ही हृदयमें स्थित होकर पापोंसे मेरी रक्षा करें।'

अपाकुर्वन्ति यद्वाचः काय-वाक्-चित्तसंभवम्।
कलङ्कमङ्गिनां सोऽयं देवनन्दी नमस्यते ॥

—ज्ञानार्णवे, श्रीशुभचन्द्रसूरिः

'जिनके वचन प्राणियोंके काय, वाक्य और मनःसम्बन्धी दोषोंको दूर कर देते हैं—जिनके वैद्यक-शास्त्रसे (उसके सम्यक् प्रयोगसे) शरीरके, व्याकरणशास्त्रसे वचनके और समाधिशास्त्रसे

मनके विकार दूर हो जाते हैं—उन श्रीदेवनन्दी आचार्यको नमस्कार है।'

न्यासं जैनेन्द्रसंज्ञं सकलबुधनुतं पाणिनीयस्य भूयो-
न्यासं शब्दावतारं मनुजततिहितं वैद्यशास्त्रं च कृत्वा।
यस्तत्त्वार्थस्य टीकां व्यरचयदिह भात्यसौ पूज्यपाद-
स्वामी भूपालवन्द्यः स्वपरहितवचः पूर्णदृग्बोधवृत्तः॥

—नगरताल्लुक-शिलालेख नं० ४६

'जिन्होंने सकल बुधजनोंसे स्तुत 'जैनेन्द्र' नामका न्यास (व्याकरण) बनाया, पुनः पाणिनीय व्याकरणपर 'शब्दावतार' नामका न्यास लिखा तथा मनुज-समाजके लिये हितरूप वैद्यक शास्त्रकी रचना की और इन सबके बाद तत्त्वार्थसूत्रकी टीका (सर्वार्थसिद्धि) का निर्माण किया, वे राजाओंसे वन्दनीय—अथवा दुर्विनीत राजासे पूजित—स्वपर-हितकारी वचनों (ग्रंथों) के प्रणेता और दर्शन-ज्ञान-चरित्रसे परिपूर्ण श्रीपूज्यपाद स्वामी (अपने गुणोंसे) खूब ही प्रकाशमान हैं।'

जैनेन्द्रं निजशब्दभागमतुलं सर्वार्थसिद्धिः परा
सिद्धान्ते निपुणत्वमुद्धकवितां जैनाभिषेकः स्वकः।
छन्दः सूक्ष्मधियं समाधिशतकं स्वास्थ्यं यदीयं विदा-
माख्यातीह स पूज्यपादमुनिपः पूज्यो मुनीनां गणैः॥

—श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० ४०

'जिनका 'जैनेन्द्र' (व्याकरण) शब्दशास्त्रोंमें अपने अतुलित भागको, 'सर्वार्थसिद्धि' (तत्त्वार्थटीका) सिद्धान्तमें बड़ी निपुणता-

को, 'जैनाभिषेक' ऊँचे दर्जेकी कविताको, 'छन्दशास्त्र' बुद्धिकी सूक्ष्मता (रचनाचातुर्य) को और 'समाधिशतक' जिनकी स्वात्म-स्थिति (स्थितिप्रज्ञता) को संसारमें विद्वानोंपर प्रकट करता है वे श्रीपूज्यपाद मुनीन्द्र मुनियोंके गणोंसे पूजनीय हैं।'

१६

श्रीपात्रकेसरि-स्मरण

भूभृत्पादानुवर्ती सन् राजसेवापराङ्मुखः ।
संयतोऽपि च मोक्षार्थी भात्यसौ पात्रकेसरी ॥

—नगरताल्लुक-शिलालेख नं० ४६

'जो राजपदसेवी राजसेवासे पराङ्मुख होकर—उसे छोड़कर—मोक्षके अर्थी संयमी मुनि बने हैं, वे पात्रकेसरी (स्वामी) भूभृत्पादानुवर्ती हुए—तपस्याके लिये गिरचरणकी शरणमें रहते हुए—खूब ही शोभाको प्राप्त हुए हैं।'

महिमा स पात्रकेसरिगुरोः परं भवति यस्य भक्त्यासीत् ।
पद्मावती सहाया त्रिलक्षणकदर्थनं कर्तुम् ॥

—श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० ५४

'जिनकी भक्तिसे पद्मावती (देवी) 'त्रिलक्षणकदर्थन' करनेमें—बौद्धों द्वारा प्रतिपादित अनुमान-विषयक हेतुके त्रिरूपात्मक (पक्ष-धर्मत्व, सपक्ष-सत्व और विपक्ष-व्यावृत्तिरूप) लक्षणका

विस्तारके साथ खण्डन करनेके लिये 'त्रिलक्षणकदर्थन' नामक ग्रंथके निर्माण करनेमें—जिनकी सहायक हुई है, उन श्रीपात्र-केसरी गुरुकी महिमा महान् है—असाधारण है।'

भट्टाकलङ्क-श्रीपाल-पात्रकेसरिणां गुणाः ।
विदुषां हृदयारूढा हारायन्तेऽतिनिर्मलाः ॥

—आदिपुराणे, श्रीजिनसेनाचार्यः

'भट्टाकलङ्क और श्रीपाल-जैसे आचार्योंके अतिनिर्मल गुणोंके साथ पात्रकेसरी आचार्यके अतिनिर्मल गुण भी विद्वानोंके हृदयोंपर हारकी तरहसे आरूढ हैं—विद्वज्जन उन्हें हृदयमें धारणकर अतिप्रसन्न होते तथा शोभाको पाते हैं।'

विप्रवंशाग्रणीः सूरिः पवित्रः पात्रकेसरी ।
स जीयाज्जिन-पादाब्ज-सेवनैक-मधुव्रतः ॥

—सुदर्शनचरित्रे, श्रीविद्यानन्दी

'वे पवित्रात्मा श्रीपात्रकेसरी सूरि जयवन्त हों—लोकहृदयों-पर सदा अपने गुणोंका सिक्का जमानेमें समर्थ हों—जो ब्राह्मण-कुलमें उत्पन्न होकर उसके अग्रनेता थे और (बादको) जिनेन्द्रदेव-के पद-कमलोंका सेवन करनेवाले असाधारण मधुकर (भ्रमर) बने थे—जिन धर्ममें दीक्षित होकर जिनदेवकी उपासना-आरा-धनाका ही जिनके एक मात्र व्रत था।'

२०

श्रीअकलङ्क-स्मरण

श्रीमद्भट्टाऽकलङ्कस्य पातु पुण्या सरस्वती ।
अनेकान्त-मरुन्मार्गे चन्द्रलेखायितं यया ॥

—ज्ञानार्णवे, श्रीशुभचन्द्राचार्यः

'श्रीसम्पन्न भट्ट-अकलंकदेवकी वह पुण्या सरस्वती—पवित्र भारती—हमारी रक्षा करो—हमें मिथ्यात्वरूपी गर्तमें पड़नेसे बचाओ—जो अनेकान्तरूपी आकाशमें चन्द्रमाके समान देदीप्यमान है—सर्वोत्कृष्टरूपसे वर्तमान है। भावार्थ—श्री अकलंकदेवकी मङ्गलमय-वचनश्री पद पदपर अनेकान्तरूपी सन्मार्गको व्यक्त करती है और इस तरह अपने उपासकों एवं शरणागतोंको मिथ्या-एकान्तरूप कुमार्गमें लगने नहीं देती। अतः हम उस अकलङ्क-सरस्वतीकी शरणमें प्राप्त होते हैं, वह अपने दिव्य-तेजद्वारा कुमार्गसे हमारी रक्षा करो।'

जीयात्समन्तभद्रस्य देवागमनसंज्ञिनः ।
स्तोत्रस्य भाष्यं कृतवानकलंको महर्द्धिकः ॥

—नगर-ताल्लुक, शिमोगा-शिलालेख नं० ४६

'जिन्होंने स्वामी समन्तभद्रके 'देवागम' नामक स्तोत्रका भाष्य रचा है—उसपर 'अष्टशती' नामका विवरण लिखा है—वे महाऋद्धिके धारक अकलंकदेव जयवन्त हों—अपने प्रभावसे सदा लोक-हृदयोंमें व्याप्त रहें।'

अकलङ्कगुरुर्जीयादकलङ्कपदेश्वरः ।
बौद्धानां बुद्धि-वैधव्य-दीक्षागुरुरुदाहृतः ॥

—हनुमच्चरिते, श्रीब्रह्मअजितः

'जो बौद्धोंकी बुद्धिको वैधव्य-दीक्षा देनेवाले गुरु कहे जाते हैं—जिनके सामने बौद्ध विद्वानोंकी बुद्धि विधवा जैसी दशाको प्राप्त होगई थी, उसका ऐसा कोई स्वामी नहीं रहा था जो बौद्ध-सिद्धान्तोंकी प्रतिष्ठाको कायम रख सके—वे अकलंकपदके अधिपति श्रीअकलंकगुरु जयवन्त हों—चिरकालतक हमारे हृदय-मन्दिरमें विराजमान रहें ।'

तर्कभूवल्लभो देवः स जयत्यकलङ्कधीः ।
जगद्द्रव्यमुषो येन दण्डिताः शाक्यदस्यवः ॥

—पार्श्वनाथचरिते, श्रीवादिराजसूरिः

'जिन्होंने जगत्के द्रव्योंको चुरानेवाले—शून्यवाद-नैरात्म्य-वादादि सिद्धान्तोंके द्वारा जगत्के द्रव्योंका अपहरण करनेवाले-उनका अभाव प्रतिपादन करनेवाले—बौद्ध दस्युओंको दण्डित किया, वे अकलंकबुद्धिके धारक तर्काधिराज श्रीअकलंकदेव जयवन्त हैं—सदा ही अपनी कृतियोंसे पाठकोंके हृदयोंपर अपना सिक्का जमानेवाले हैं ।'

भट्टाकलङ्कोऽकृत सौगतादि-दुर्वाक्यपंकैस्सकलङ्कभूतम् ।
जगत्स्वनामेव विधातुमुच्चैः सार्थं समन्तादकलङ्कमेव ॥

—श्रवणबेल्गोल-शिलालेख नं० १०५

'बौद्धादि-दार्शनिकोंके मिथ्यैकान्तवादरूप दुर्वचन-पङ्कसे सक-लंक हुए जगत्को भट्टाकलंकदेवने, अपने नामको मानों पूरी

तौरसे सार्थक करनेके लिये ही, अकलंक बना डाला है—जगत्-के जीवोंकी बुद्धिमें प्रविष्ट हुए एकान्त-मलको अपने अनेकान्त-मय-वचनप्रभावसे धो डाला है।'

इत्थं समस्तमतवादि-करीन्द्रदर्प-
मुन्मूलयन्नमलमानदृढप्रहारैः ।
स्याद्वाद-केसरसटाशततीव्रमूर्तिः
पञ्चाननो भुवि जयत्यकलङ्कदेवः ॥

—न्यायकुमुदचन्द्रे, श्रीप्रभाचन्द्राचार्यः

'इस प्रकार जिन्होंने निर्दोष प्रमाणके दृढ प्रहारोंसे समस्त अन्यमतवादिरूप-गजेन्द्रोंके गर्वको निर्मूल कर दिया है वे स्याद्वादमय सैंकड़ों केसरिक जटाओंसे प्रचण्ड एवं प्रभावशालिनी मूर्तिके धारक श्रीअकलंकदेव भूमण्डलपर केहरि-सिंहके समान जयशील हैं—अपनी प्रवचन-गर्जनासे सदा ही लोक-हृदयोंको विजित करनेवाले हैं।'

जीयाच्चिरमकलङ्कब्रह्मा लघुहव्वनृपति-वरतनयः ।
अनवरत-निखिलजन-नुतविद्यः प्रशस्तजन-हृद्यः ॥

—तत्त्वार्थवार्त्तिक-प्रथमाध्याय-प्रशस्तिः

'जिनकी विद्या—ज्ञानमाहात्म्य—के सामने सदा सब जन नतमस्तक रहते थे और जो सज्जनोंके हृदयोंको हरनेवाले थे—उनके प्रेमपात्र एवं आराध्य बने हुए थे—वे लघुहव्वराजाके श्रेष्ठ-पुत्र श्रीअकलंकब्रह्मा—अकलंक नामके उच्चात्मा महर्षि—चिरकाल तक जयवन्त हों—अपने प्रवचनतीर्थ-द्वारा लोकहृदयोंमें सदा सादर विराजमान रहें।'

देवस्याऽनन्तवीर्योऽपि पदं व्यक्तुं तु सर्वतः ।
न जानीतेऽकलङ्कस्य चित्रमेतत्परं भुवि ॥
अकलङ्कवचोऽम्भोधेः सूक्तरत्नानि यद्यपि ।
गृह्यन्ते बहुभिः स्वैरं सद्रत्नाकर एव सः ॥

—सिद्धिविनिश्चये, श्रीअनन्तवीर्याचार्यः

'अनन्तवीर्य होकर—कहलाकर—भी मुझे अकलंकदेवके पदसमूह (शास्त्र) को पूरी तौरसे व्यक्त करना नहीं आता—मैं उसकी व्याख्यामें अपनेको असमर्थ पाता हूँ, यह लोकमें बड़े ही आश्चर्यकी बात है! अकलंकके वचनसमुद्रसे यद्यपि बहुत विद्वानोंने स्वेच्छानुसार सूक्तरत्नोंको ग्रहण किया है—अपनी अपनी कृतियोंमें अकलंककी सूक्तियोंको अपनाया है—फिर भी वह उत्तम (सूक्त-) रत्नोंका आकर-खजाना बना ही हुआ है—उसकी सद्रत्न-निधिका अन्त होनेमें नहीं आता।'

भूयोभेदनयावगाह-गहनं देवस्य यद्वाङ्मयम् ।
कस्तद्विस्तरतो विविच्य वदितुं मन्दः प्रभुर्मादृशः ॥

——न्यायविनिश्चय-विवरणे, श्रीवादिराजसूरिः

'श्रीअकलंकदेवका जो प्रवचन—'न्यायविनिश्चय' ग्रन्थ—बहुभेदों तथा नयोंके अवगाहनसे गहन है—नाना प्रकारके भंगों तथा नयोंकी विविक्षाको आत्मसात् करके अतिगंभीर बना हुआ है—उसका विस्तारसे विवेचनात्मक कथन करनेके लिये मेरे जैसा मन्दबुद्धि कौन समर्थ हो सकता है ?—कोई भी नहीं।'

येनाऽशेषकुतर्कविभ्रमतमो निर्मूलमुन्मूलितम्
स्फारागाध-कुनीतिसार्थसरितो निःशेषतः शोषिताः ।

स्याद्वादाऽप्रतिमप्रभूतकिरणैः व्याप्तं जगत् सर्वतः
स श्रीमान् अकलङ्कभानुरसमो जीयात् जिनेन्द्रः प्रभुः ॥

—न्यायकुमुदचन्द्रे, श्रीप्रभाचन्द्राचार्यः

'जिन्होंने स्याद्वादरूप-अनुपम-समर्थ किरणोंसे कुतर्कोत्पन्न सम्पूर्ण विभ्रमान्धकारको मूलसे उन्मूलित किया है—उसका पूर्णतः विनाश किया है, कुनयरूप विस्तृत तथा अगाध नदियोंके समूहको पूरी तौरसे सुखा दिया है और अपनी उन किरणोंसे जगतको सर्वत्र व्याप्त किया है वे अद्वितीय सूर्य श्रीअकलङ्कप्रभु जयवन्त हों, जो विजेताओंमें प्रधान थे।'

मिथ्यायुक्तिपलालकूटनिचयं प्रज्वाल्य निःशेषतः
सम्यग्युक्तिमहांशुभिः पुनरियं व्याख्या परोक्षे कृता ।
येनासौ निखिल-प्रमाण-कमल-प्राज्य-प्रबोधप्रदः
भास्वानेष जयत्यचिन्त्य-महिमा शास्ताऽकलङ्को जिनः ॥३॥

—न्यायकुमुदचन्द्रे, श्रीप्रभाचन्द्राचार्यः

'जिन्होंने समीचीन-युक्तियोंरूप महती किरणोंसे मिथ्या-युक्तियोंरूप पुरालके-पूलोंके समूहको पूर्णतः जलाकर परोक्ष-प्रमाणकी व्याख्या की है—उसे भले प्रकार स्पष्ट तथा व्यक्त किया है—वे सम्पूर्ण प्रमाण-कमलोंके उत्कट उद्बोधक—उन्हें पूर्णतः विकसित करनेवाले—अचिन्त्य-महिमाके धारक, विजयी और शास्ता अकलंकदेव जयवन्त हैं—लोक-हृदयोंमें अपना प्रभाव अंकित किये हुए हैं।'

२१

श्रीविद्यानन्द-स्मरण

—*०::०*—

अलञ्चकार यस्सार्वमाप्तमीमांसितं मतम् ।
स्वामिविद्यादिनन्दाय नमस्तस्मै महात्मने ॥
यः प्रमाणाप्तपत्राणां परीक्षाः कृतवान्नुमः ।
विद्यानन्दमिनं तं च विद्यानन्दमहोदयम् ॥
विद्यानन्दस्वामी विरचितवान् श्लोकवार्तिकालंकारम् ।
जयति कवि-विबुध-तार्किकचूडामणिरमलगुणनिलयः ॥

—शिमोगा-नगरताल्लुक-शिलालेख नं० ४६

'जिन्होंने सर्वहितकारी आप्तमीमांसित-मतको अलंकृत किया है—स्वामी समन्तभद्रके परमकल्याणरूप 'आप्तमीमांसा' ग्रन्थको अपनी अष्टसहस्री टीकाके द्वारा सुशोभित किया है—उन महान् आत्मा स्वामी विद्यानन्दको नमस्कार है।'

'जो प्रमाणों, आप्तों तथा पत्रोंकी परीक्षा करनेवाले हुए हैं—जिन्होंने प्रमाणपरीक्षा, आप्तपरीक्षा और पत्रपरीक्षा जैसे महत्वके ग्रन्थ लिखे हैं—उन विद्या तथा आनन्दके महान् उदयको लिये हुए अथवा (प्रकारान्तरसे) 'विद्यानन्द-महोदय' ग्रन्थके रचयिता स्वामी विद्यानन्दकी हम स्तुति करते हैं—उनकी विद्याका यशोगान करते हैं।'

'जिन्होंने 'श्लोकवार्तिकालंकार' नामका ग्रंथ रचा है वे कवियोंके चूडामणि, विबुधजनोंके मुकुटमणि और तार्किकोंमें

प्रधान तथा निर्मल गुणोंके आश्रयस्थान श्रीविद्यानन्दस्वामी जयवन्त हैं--सदा ही अपने पाठकों-विद्वज्जनोंके हृदयमें अपने अगाध पाण्डित्यकी छाप जमानेवाले हैं।'

ऋजुसूत्रं स्फुरद्रत्नं विद्यानन्दस्य विस्मयः।
शृण्वतामप्यलङ्कारं दीप्तिरंगेषु रङ्गति ॥

—पार्श्वनाथचरिते, श्रीवादिराजसूरिः

'श्रीविद्यानन्दाचार्यके ऋजुसूत्ररूप तथा देदीप्यमानरत्नरूप अलंकारको जो सुनते भी हैं उनके भी अंगोंमें दीप्ति दौड़ जाती है. यह आश्चर्यकी बात है! अर्थात् अलंकारों-आभूषणोंको जो मनुष्य धारण करता है उसीके अंगोंमें दीप्ति दौड़ा करती है--सुननेवालोंके अंगोंमें नहीं; परन्तु श्रीविद्यानन्दस्वामीके सत्यसूत्रमय और स्फुरद्रत्नरूप आप्तमीमांसाऽलंकार (अष्टसहस्री) और श्लोकवार्तिकालंकार (तत्त्वार्थटीका) ऐसे अद्भुत अलंकार हैं कि उनके सुननेसे भी अंगोंमें दीप्ति दौड़ जाती है—सुननेवालोंके अंगोंमें विद्युत्तेजका-सा कुछ ऐसा संचार होने लगता है कि एकदम प्रसन्नता जाग उठती है।'

२२

श्रीमाणिक्यनन्दि-स्मरण

साभासं गदितं प्रमाणमखिलं संख्या-फल-स्वार्थतः
सुव्यक्तैः सकलार्थसार्थविषयैः स्वल्पैः प्रसन्नैः पदैः।

येनाऽसौ निखिल-प्रबोध-जननो जीयाद्गुणाम्भोनिधिः
वाक्कीर्त्योः परमालयोऽत्र सततं माणिक्यनन्दिप्रभुः ॥

—प्रमेयकमलमार्तण्डे, श्रीप्रभाचन्द्राचार्यः

'जिन्होंने सकल अर्थसमूहको अपना विषय करनेवाले स्वल्प-(अल्पाक्षर), प्रसन्न (प्रसादगुणविशिष्ट) और सुव्यक्त (स्पष्ट) पदों (सूत्रवाक्यों) के द्वारा संपूर्ण प्रमाण और प्रमाणाभासका—संख्या, फल तथा स्वविषयकी दृष्टिसे कथन किया है, वे सकल प्रबोधके जनक, गुणसमुद्र, वाणी और कीर्तिके परमस्थान श्रीमाणिक्यनन्दिप्रभु लोकमें सदा जयवन्त होवें—अपने 'परीक्षा-मुखसूत्र' के द्वारा सदा लोकहृदयमें विराजित रहें।'

अकलङ्कवचोऽम्भोधेरुद्दध्रे येन धीमता ।
न्यायविद्याऽमृतं तस्मै नमो माणिक्यनन्दिने ॥

—प्रमेयरत्नमालायां, श्रीलघुअनन्तवीर्यः

'जिन्होंने अकलङ्कदेवके वचन-समुद्रको मथकर उससे न्याय-विद्यारूप अमृत निकाला है—अकलङ्कके अगाध न्यायशास्त्रोंपरसे सार खींचकर 'परीक्षामुखसूत्र' की अमर रचना की है—उन बुद्धिमान आचार्य श्रीमाणिक्यनन्दीको नमस्कार हो।'

२३
श्रीअनन्तवीर्य-स्मरण

वन्दाम्यनन्तवीर्याब्दं यद्वागमृतवृष्टिभिः ।
जगज्जिघत्सन्निर्वाणः शून्यवादहुताशनः ॥

—पार्श्वनाथचरिते, श्रीवादिराजसूरिः

'जिनकी वचनामृत-वृष्टियोंसे जगत्को खा जाने-भस्मसात् कर देनेवाली शून्यवादरूप अग्नि शान्त होगई उन श्रीअनन्तवीर्याचार्यरूप मेघको मैं नमस्कार करता हूँ।'

गूढमर्थमकलङ्कवाङ्मयागाधभूमिनिहितं तदर्थिनाम् ।
व्यञ्जयत्यमलमनन्तवीर्यवाक् दीपवर्तिरनिशं पदे पदे ॥

न्यायविनिश्चय-विवरणे, श्रीवादिराजसूरिः

'श्रीअनन्तवीर्यकी निर्मलवाणी—निर्दोषटीका—अकलङ्क वाङ्मयकी—अकलंकदेवके सिद्धिविनश्चयादिशास्त्रोंकी—अगाध भूमिमें संनिहित—गहराईमें स्थित—गूढअर्थको पद पदपर व्यक्त करनेवाली समर्थ दीपशिखा है—टौर्चके समान है।'

२४

श्रीप्रभाचन्द्र-स्मरण

अभिभूय निजविपक्षं निखिलमतोद्योतनो गुणाम्भोधिः ।
सविता जयतु जिनेन्द्रः शुभप्रबन्धः प्रभाचन्द्रः ॥

—न्यायकुमुदचन्द्र-प्रशस्तिः

'अपने विपक्ष-समूहको पराजित करके जो समस्तमतोंके यथार्थ स्वरूपको प्रकाशित करनेवाले हैं वे गुण-समुद्र, जितेन्द्रियोंमें अग्रगण्य और शुभप्रबन्ध—न्यायकुमुदचन्द्र जैसे पुण्य-प्रबन्धोंके विधाता—प्रभाचन्द्राचार्य नामके सूर्य जयवन्त हों—अपने वचन-तेजसे लौकिकजनोंके हृदयान्धकारको दूर करनेमें समर्थ होवें।'

चन्द्रांशुशुभ्रयशसं प्रभाचन्द्रकविं स्तुवे।
कृत्वा चन्द्रोदयं येन शश्वदाह्लादितं जगत्॥

आदिपुराणे, श्रीजिनसेनाचार्यः

'जिन्होंने चन्द्रमाका उदय करके—'न्यायकुमुदचन्द्र' ग्रन्थकी रचना करके—अथवा 'चन्द्रोदय' नामक ग्रन्थको रचकर जगत्को सदाके लिये आनन्दित किया है उन चन्द्र-किरण-समान उज्ज्वल यशके धारक, कवि प्रभाचन्द्रकी मैं स्तुति करता हूँ।'

माणिक्यनन्दी जिनराजवाणी-प्राणाधिनाथः परवादि-मर्दी।
चित्रं प्रभाचन्द्र इह क्षमायां मार्त्तण्ड-वृद्धौ नितरां व्यदीपीत्॥
सुखिने न्यायकुमुदचन्द्रोदयकृते नमः।
शाकटायनकृत्सूत्रन्यासकर्त्रे व्रती(प्रभे)न्दवे॥

—शिमोगा-नगरताल्लुक-शिलालेख नं० ४६

'जो श्रीमाणिक्य (आचार्य) को आनन्दित करनेवाले—उनके 'परीक्षामुख' ग्रन्थपर 'प्रमेयकमलमार्तण्ड' नामका भाष्य लिखकर उनकी परोक्ष प्रसन्नता सम्पादन करनेवाले—हैं तथा जिनराजकी वाणीके प्राणाधार हैं—जिन्हें पाकर जिनवाणीके उत्कर्षमें वृद्धि हुई है। अथवा जो माणिक्यनन्दी—यतिराजकी वाणी (परीक्षामुख-सूत्र) के प्राणाधिपति हैं—प्रमेयकमलमार्तण्ड नामक भाष्यके द्वारा उसके प्राणों (तत्त्वों) के पूर्णतः संरक्षक हैं। और जिन्होंने परिवादियोंका मर्दन किया है—उनके मिथ्याभिमानका खण्डन किया है—वे प्रभाचन्द्र इस पृथ्वीपर निरन्तर ही मार्तण्डकी वृद्धि-में प्रदीप्त रहे हैं यह एक आश्चर्यकी बात है—अर्थात् प्रभापूर्ण चन्द्रमा यद्यपि मार्त्तण्ड (सूर्य) की तेजोवृद्धिमें कोई सहायक नहीं

होता—उल्टा उसके तेजके सामने हतप्रभ होजाता है, परन्तु ये प्रभाचन्द्र मार्तण्ड (प्रमेयकमलमार्तण्ड) की तेजोवृद्धिमें निरन्तर ही अव्याहतशक्ति रहे हैं, यही एक विचित्रता है।'

'जो न्यायकुमुदचन्द्रके उदयकारक—जन्मदाता—हुए हैं और जिन्होंने शाकटायनके सूत्र—व्याकरणशास्त्र—पर न्यास रचा है, उन प्रभाचन्द्रमुनिको नमस्कार है।'

२५

श्रीवीरसेन-स्मरण

शब्दब्रह्मेति शाब्दैर्गणधरमुनिरित्येव राद्धान्तविद्भिः।
साक्षात्सर्वज्ञ एवेत्यवहितमतिभिः सूक्ष्मवस्तुप्रणीतः (प्रवीणैः?)
यो दृष्टो विश्वविद्यानिधिरिति जगति प्राप्तभट्टारकाख्यः
स श्रीमान् वीरसेनो जयति परमतध्वान्तभित्तंत्रकारः॥

—धवला-प्रशस्ति

'जिन्हें शाब्दिकों (वैय्याकरणों) ने 'शब्दब्रह्मा'के रूपमें, सिद्धान्तशास्त्रियोंने 'गणधरमुनि' के रूपमें, सावधानमतियोंने 'साक्षात्सर्वज्ञ' के रूपमें, और सूक्ष्मवस्तुविज्ञोंने 'विश्वविद्यानिधि' के रूपमें देखा—अनुभव किया—और जो जगत्में 'भट्टारक' नामसे प्रसिद्धिको प्राप्त हुए, वे (लोकमें छाये हुए) अन्यमतोंके अन्धकारको भेदनेवाले शास्त्रकार—धवलादिके रचयिता—श्रीमान् वीरसेनाचार्य जयवन्त हैं—विद्वद्हृदयोंमें सब प्रकारसे अपना सिक्का जमाए हुए हैं।'

प्रसिद्ध-सिद्धान्त-गभस्तिमाली समस्तवैय्याकरणाधिराजः।
गुणाकरस्तार्किक-चक्रवर्ती प्रवादिसिंहो वरवीरसेनः ॥

—धवला, प्रशस्ति

'श्रीवीरसेनाचार्य प्रसिद्ध सिद्धान्तों—षड्खण्डागमादिकों—को प्रकाशित करनेवाले सूर्य थे, समस्त वैय्याकरणोंके अधिपति थे, गुणोंकी खानि थे, तार्किकचक्रवर्ती थे और प्रवादिरूपी गजोंके लिये सिंह-समान थे।'

श्रीवीरसेन इत्यात्त-भट्टारकपृथुप्रथः।
स नः पुनातु पूतात्मा वादिवृन्दारको मुनिः ॥
लोकवित्वं कवित्वं च स्थितं भट्टारके द्वयं।
वाग्मिता वाग्मिनो यस्य वाचा वाचस्पतेरपि ॥
सिद्धान्तोपनिबन्धानां विधातुर्मद्गुरोश्चिरम्।
मन्मनःसरसि स्थेयान्मृदुपादकुशेशयम् ॥
धवलां भारतीं तस्य कीर्तिं च शुचि-निर्मलाम्।
धवलीकृतनिःशेषभुवनां तां नमाम्यहम् ॥

—आदिपुराणे, श्रीजिनसेनाचार्यः

'जो भट्टारककी बहुत बड़ी ख्यातिको प्राप्त थे वे वादिशिरोमणि और पवित्रात्मा श्रीवीरसेन मुनि हमें पवित्र करें—हमारे हृदयमें निवास कर पापोंसे हमारी रक्षा करें।'

'जिनकी वाणीसे वाग्मी बृहस्पतिकी वाणीभी पराजित होती थी उन भट्टारक वीरसेनमें लौकिक विज्ञता और कविता दोनों गुण थे।'

'सिद्धान्तागमोंके उपनिबन्धों—धवलादिग्रन्थों—के विधाता श्रीवीरसेनगुरुके कोमल चरण-कमल मेरे हृदय-सरोवरमें चिर-काल तक स्थिर रहें।'

'श्रीवीरसेनकी धवला भारती—धवला-टीकांकित सरस्वती अथवा विशुद्ध वाणी—और चन्द्रमाके समान निर्मल कीर्तिकी, जिसने अपने धवल प्रकाशसे इस सारे संसारको धवलित (उज्ज्वल) कर दिया है, मैं वन्दना करता हूँ।'

तत्र वित्रासिताशेष-प्रवादि-मद-वारणः ।
वीर-सेनाग्रणीर्वीरसेनभट्टारको बभौ ॥

—उत्तरपुराणे, श्रीगुणभद्रसूरिः

'मूलसंघान्तर्गत सेनान्वयमें वीरकी सेनाके अग्रणी (नेता) वीरसेन भट्टारक हुए हैं, जिन्होंने सम्पूर्ण प्रवादिरूपी मस्त हाथियोंको परास्त किया था।'

तदन्ववाये विदुषां वरिष्ठः स्याद्वादनिष्ठः सकलागमज्ञः ।
श्रीवीरसेनोऽजनि तार्किकश्रीः प्रध्वस्तरागादिसमस्तदोषः ॥
यस्य वाचां प्रसादेन ह्यमेयं भुवनत्रयम् ।
आसीदष्टांगनैमित्तज्ञानरूपं विदां वरम् ॥

—विक्रान्तकौरवे, श्रीहस्तिमल्लः

'उन (स्वामी समन्तभद्र)के वंशमें श्रीवीरसेनाचार्य हुए हैं, जो कि विद्वानोंमें श्रेष्ठ थे स्याद्वादपर अपना दृढ निश्चय एवं आधार रखनेवाले थे, तार्किकोंकी शोभा थे और रागादि-सम्पूर्ण-दोषोंका विध्वंस करनेवाले थे। साथ ही, जिनके वचनोंके प्रसादसे यह अज्ञेय भुवनत्रय विद्वानोंके लिये अष्टाङ्ग—निमित्तज्ञानका अच्छा विषय बन गया था।'

——

२६

श्रीजिनसेन-स्मरण

—+*****+—

जिनसेनमुनेस्तस्य माहात्म्यं केन वर्ण्यते ।
शलाकापुरुषाः सर्वे यद्वचोवशवर्तिनः ॥

—पार्श्वनाथचरिते, श्रीवादिराजसूरिः

'सम्पूर्ण शलाकापुरुष जिनके वचनके वशवर्ती हैं—जिन्होंने महापुराण लिखकर ६३ शलाकापुरुषोंको (उनके जीवन वृत्तान्तको) अपने अधीन किया है—उन श्रीजिनसेनाचार्यका माहात्म्य कौन वर्णन कर सकता है ? कोई भी नहीं ।'

याऽमिताऽभ्युदये पार्श्वजिनेन्द्र-गुण-संस्तुतिः ।
स्वामिनो जिनसेनस्य कीर्तिं संकीर्त्तयत्यसौ ॥

—हरिवंशपुराणे, श्रीजिनसेनसूरिः

'पार्श्वाभ्युदय' काव्यमें पार्श्वजिनेन्द्रकी जो अनुपम गुणसंस्तुति है, वह श्रीजिनसेनस्वामीकी कीर्तिका आज भी संकीर्तन—खुलागान—कर रही है ।'

यदि सकलकवीन्द्र-प्रोक्तसूक्त-प्रचार-
श्रवण-सरसचेतास्तत्त्वमेव सखे ! स्याः ।
कविवर-जिनसेनाचार्य-वक्त्रारविन्द-
प्रणिगदित-पुराणाकर्णनाभ्यर्णकर्णः ॥—अज्ञातकविः

'हे मित्र ! यदि तुम सम्पूर्ण कवि-श्रेष्ठोंकी सूक्तियोंके प्रचारको सुनकर अपना हृदय सरस बनाना चाहते हो तो कविवर जिनसेनाचार्यके मुख-कमलसे विनिर्गत (कथित) पुराणको सुननेके लिये कानोंको समीप लाओ—'आदिपुराण' को ध्यानपूर्वक सुनो ।'

२७

श्रीवादिराज-स्मरण

आरुह्याम्बरमिन्दुबिम्ब-रचितौत्सुक्यं सदा यद्यश-
श्छत्रं वाक्-चमरीज-राजि-रुचयोऽभ्यर्णं च यत्कर्णयोः ।
सेव्यः सिंहसमर्च्य-पीठ-विभवः सर्व-प्रवादि-प्रजा-
दत्तोच्चैर्जयकार-सार-महिमा श्रीवादिराजो विदाम् ॥

—मल्लिषेणप्रशस्ति (श्र० शि० ५४)

'जिनका यशरूपी छत्र आकाशको सदैव घेरे हुए था और उसने चन्द्रबिम्बके लिये उत्सुकता उत्पन्न कर दी थी—चन्द्रमा भी जिनके यशके विस्तार और उसकी उज्ज्वलता तथा स्थिरताको देखकर अपनेको हीन अनुभव करता हुआ तद्रूप होनेके लिये उत्सुक बना हुआ था—, (प्रशंसा-) वाक्यरूपी चमर-समूहकी किरणें निरन्तर ही जिनके कानोंके समीप पड़ती थीं—जिन्हें अपना यशोगान स्पष्ट सुनाई पड़ता था—, जिनका आसनविभव (माहात्म्य) सदा ही सिंह-समर्च्य था—जयसिंह नरेशके द्वारा पूजित था—और सम्पूर्ण प्रवादीजन उच्च स्वरसे जिनकी महिमाका जयजयकार किया करते थे, वे श्रीवादिराजसूरि विद्वानोंके द्वारा सेवनीय हैं।

सदसि यदकलङ्कः कीर्तने धर्मकीर्ति-
र्वचसि सुरपुरोधा न्यायवादेऽक्षपादः ।

इति समय-गुरूणामेकतः संगतानाम्
प्रतिनिधिरिव देवो राजते वादिराजः ॥

—नगर-ताल्लुक शिलालेख नं० ३६

'जो सभामें अकलंक थे—विद्वानों तथा राजाओंकी परिषदोंमें उपस्थित होकर अपना प्रभाव व्यक्त करनेमें अकलङ्कदेवके समान कुशल थे—, कीर्तन करनेमें—प्रतिपादन करनेके ढगमें—धर्मकीर्ति (बौद्धाचार्य)के सदृश दक्ष थे। बोलनेमें बृहस्पतिके तुल्य चतुर थे, और न्यायवादमें—न्यायपदार्थोंका विश्लेषण करनेमें—(न्यायदर्शनके प्रवर्तक) अक्षपाद (गौतम) के समान निपुण थे। वे श्रीवादिराजदेव इन विभिन्न धर्मगुरुओंके एकीभूत प्रतिनिधिरूपसे शोभायमान हुए हैं।

सत्साधु-स्मरण-मंगलपाठका पद्यानुक्रम

पद्य	पृष्ठ	पद्य	पृष्ठ
अकलङ्कगुरुर्जीया-	६०	कामं द्विषन्नप्युपपत्तिचक्षुः	१५
अकलङ्कवचोम्भोधे-	६६	कार्यादेर्भेद एव स्फुटमिह	४८
अचिन्त्य-महिमा देवः	५५	कीर्त्या महत्या भुवि वर्द्धमानं	१०
अताम्रनयनोत्पलं	६	कुवादिनः स्वकान्तानां	४६
अतुच्छ-गुणसम्पातं	२४	क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु	२
अद्वैताद्याग्रहोग्रग्रह-	३८	गुणान्विता निर्मलवृत्तमौक्तिका	३९
अनन्तविज्ञानमतीतदोष-	१२	गूढमर्थमकलङ्क-वाङ्मया-	६७
अपाकुर्वन्ति यद्वाचः	५५	चन्द्रांशुशुभ्रयशसं	६८
अपेक्षैकान्तादि-प्रबल-	१८	जगत्प्रसिद्धबोधस्य	५२
अभिभूय निजविपक्षं	६७	जयउ धरसेणणाहो	१९
अभूदुमास्वातिमुनिः	२३	जिनसेनमुनेस्तस्य	७२
अलञ्चकार यस्सार्व-	६४	जियभय-जियउवसग्गे	[illegible]७
अवटुतटमटति झटिति	४७	जीयाच्चिरमकलङ्कब्रह्मा	६१
आरुद्धाम्बरमिन्दुबिम्ब-	७३	जीयात्समन्तभद्रस्य	५९
आहार्येभ्यः स्पृहयति परं	४	जीयात्समन्तभद्रोऽसौ	४८
इत्थं समस्तमतवादि-	६१	जीवसिद्धि-विधायीह	३३
इन्द्रभूति-भाषित-प्रमेय-	४२	जेणिह कसायपाहुड-	१८
ऋजुसूत्रं स्फुरद्रत्नं	६५	जैनेन्द्रं निजशब्दभाग-	५६
कर्मारातिं विजित्य	१६	तत्त्वार्थसूत्रकर्तारमु-	२३
कवीनां गमकानां च	३०	तत्त्वार्थसूत्रकर्त्तारं	२४
कवीनां तीर्थकृद्देवः	५४	तत्त्वार्थसूत्र-व्याख्यान-	३७

पद्य	पृष्ठ	पद्य	पृष्ठ
तत्र वित्रासिताशेष-	७१	प्रसिद्धसिद्धान्तगभस्तिमाली	७०
तदन्ववाये विदुषां वरिष्ठः	७१	भट्टाकलङ्क-श्रीपाल-	५८
तर्कभूवल्लभो देवः	६०	भट्टाकलङ्कोऽकृत सौगतादि-	६०
तव जिन शासन-विभवो	१३	भद्रबाहुरग्रिमः समग्रबुद्धि-	१७
तस्यान्वये भूविदिते बभूव	२१	भव्यैकलोकनयनं	२५
तीर्थं सर्वपदार्थतत्वविषय-	२५	भूभृत्पादानुवर्ती सन्	५७
त्यागी स एव योगीन्द्रो	३५	भूयोभेदनयावगाहगहनं	६२
दयादमत्यागसमाधिनिष्ठं	१४	मदुक्तिकल्पलतिकां	५२
दिगम्बरं गुणागारं	२७	महिमा स पात्रकेसरिगुरोः	५७
देवस्याऽनन्तवीर्योऽपि	६२	मंगलं भगवान् वीरो	१
धवलां भारतीं तस्य	७०	माणिक्यनन्दी जिनराज-	६८
नमः श्रीवर्द्धमानाय	६	मातृ-मान-मेय-सिद्धि-	४०
नमः समन्तभद्राय	२६	मान-नीति-वाक्य-सिद्ध-	४२
नित्याद्येकान्तगर्तप्रपतन्विवशान्	३१	मानस्तम्भं प्रदृष्ट्वा	१६
निरन्तरानन्तगतात्मवृत्तिं	१८	मिथ्यायुक्तिपलालकूट-	६३
न्यासं जैनेन्द्रसंज्ञं	५६	यः प्रमाणाप्तपत्राणां	६४
पणमह कय-भूयबलिं	२०	यदि सकल-कवीन्द्र-	७२
पणमामि पुप्फदंतं	२०	यद्भारत्याः कविः सर्वो	२८
पसियउ महु धरसेणो	१६	यस्य च सद्गुणाधारा	३५
पात्रकेसरि-प्रभाव-सिद्धकारिणीं	४१	यस्य वाचां प्रसादेन	७१
पूज्यपादः सदा पूज्य-	५५	याऽमिताऽभ्युदये पार्श्व-	७२
प्रज्ञाधीश-प्रपूज्योज्वल-	३७	येनाऽशेषकुतर्कविभ्रमतमो	६२
प्रमाण-नय-निर्णीत-	३५	येनाऽशेषकुनीतिवृत्तिसरितः	२६
प्रवादि-करि-यूथानां	५२	यो देवनन्दि-प्रथमाभिधानः	५३

पद्य	पृष्ठ	पद्य	पृष्ठ
यो निःशेषजिनोक्तधर्म-	३६	सदसि यदकलङ्कः	७३
यो भद्रबाहुः श्रुतकेवलीनां	१७	सद्दृष्टि-ज्ञान-वृत्तात्मा	१०
रजोभिरस्पृष्टतमत्व-	२२	स प्राणिसंरक्षणसावधानो	२३
लक्ष्मीभृत्परमं निरुक्ति-	४४	समन्तभद्रनामानं	२७
लोकवित्वं कवित्वं च	७०	समन्तभद्रस्स चिराय जीयाद्	४८
वन्दाम्यनन्तवीर्याब्दं	६६	समन्तभद्रस्संस्तुत्यः	२८
वन्दे समन्तभद्रं तं	२६	समन्तभद्रं सद्बोधं	२७
वन्द्यो भस्मक-भस्मसात्-	४५	समन्तभद्रादिकवीन्द्रभास्वतां	३१
वन्द्यो विभुर्भुवि न कैरिह	२१	समन्तभद्रादिमहाकवीश्वराः	५०
विद्यानन्दस्वामी	६४	समन्तभद्रादिमहाकवीश्वरैः	३४
विप्रवंशाग्रणीः सूरिः	५८	समन्तभद्रोऽजनि भद्रमूर्ति-	३०
विस्तीर्ण-दुर्नयमय-	३२	समन्तभद्रो भद्रार्थो	२८
व्यापकद्वयाप्तमार्ग-	४३	समन्ताद्भुवने भद्रं	२६
शब्दब्रह्मे ति शाब्दै-	६६	सरस्वती-स्वैरविहार-भूमयः	४६
शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः	३	सर्वान्तवत्तद्गुणमुख्यकल्पं	१४
शुद्धि-शक्त्योः परां काष्ठां	६	सान्तसाद्यनाद्यनन्तमध्य-	४३
श्रीपूज्यपादमुनिरप्रतिमौषध-	५४	साभासं गदितं प्रमाणमखिलं	६५
श्रीपूज्यपादोद्धृतधर्म-	५३	सास्मरीमि तोष्टवीमि	४०
श्रीमत्समन्तभद्रस्य	३३	सिद्धान्तोपनिबन्धानां	७०
श्रीमत्समन्तभद्राख्ये	४६	सुखिने न्यायकुमुद-	६८
श्रीमद्भट्टाकलङ्कस्य	५६	सूरि-सूक्ति-वन्दिता-	४१
श्रीमत्समन्तभद्रादि-	५०	स्तुतिविद्यां समाश्रित्य	३६
श्रीमत्समन्तभद्राद्याः	५०	स्थेयाज्जातजयध्वजा-	१२
श्रीमानुमास्वातिरयं यतीश-	२३	स्यात्कार-मुद्रित-समस्त-	३२
श्रीमूलसंघव्योम्नेन्दु-	४५	स्वामिनश्चरितं तस्य	३४
श्रीवीरसेन इत्यात्त-	७०	स्वामी समन्तभद्रो मे	५१

वीरसेवामन्दिरके अन्य प्रकाशन

१ समाधितंत्र—संस्कृत और हिन्दी टीका-सहित। ॰)

२ बनारसी-नाममाला (हिन्दी-शब्दकोष)। ।)

३ अनित्य-भावना—हिन्दी पद्यानुवाद और भावार्थ-सहित। ॰)

४ पुरातन-जैनवाक्य-सूची (दि॰ जैनप्राकृतपद्यानुक्रमणी) (प्रस्तावना छपते ही प्रकाशित होनेवाली)। १२)

५ उमास्वामि-श्रावकाचार-परीक्षा (ऐतिहासिक प्रस्तावना-सहित) ।)

६ अध्यात्मकमलमार्तण्ड—हिन्दी-अनुवादादि-सहित। ।।।)

७ प्रभाचन्द्रका तत्त्वार्थसूत्र—सानुवाद-व्याख्या। ।)

८ न्यायदीपिका (न्यायाचार्य पं॰ दरबारीलाल कोठिया द्वारा अनुवादित और सम्पादित महत्वका विशिष्ट संस्करण)। (प्रेसमें)

९ जैनग्रन्थ-प्रशस्ति-संग्रह। (प्रेसमें)

१० बृहत्-जैनग्रन्थ-सूची। (प्रेसमें)

११ समन्तभद्रभारती—अनुवादादि-सहित (प्रेसमें)

प्रेसकी तय्यारीमें

१२ जैनलक्षणावली—(लक्षणात्मक जैनपारिभाषिक शब्दकोष)।

१३ लोक-विजय-यंत्र—भविष्यज्ञापक प्राकृत ग्रन्थ, हिन्दी-टीका-सहित।

१४ भद्रबाहुनिमित्त-शास्त्र—निमित्तों-द्वारा भविष्य-ज्ञानका अपूर्व ज्योतिष ग्रन्थ, हिन्दी अनुवादादि-सहित।

१५ अनेकार्थ-नाममाला—(पं॰ भगवतीदासकृत शब्दकोष)।

१६ मृत्यु-विज्ञान—मृत्युको पहलेसे जानलेनेके उपायोंको बतलानेवाला प्राचीन अलभ्य प्राकृत भाषाका ग्रन्थ। नई हिन्दी-टीका-सहित।

१७ आय-ज्ञान-तिलक—प्रश्न-शास्त्र और निमित्त-शास्त्रका पुराना प्राकृत ग्रन्थ, संस्कृत तथा नई हिन्दी-टीका-सहित।

१८ कर्म-प्रकृति—(नेमिचन्द्र-सिद्धान्तचक्रवर्ति-विरचित) सानुवाद।

१९ विश्वतत्त्व-प्रकाश—(भावसेन-त्रैविद्य-विरचित)

२० ऐतिहासिक जैनव्यक्ति-कोष—भ॰ महावीरके बादके आचार्यों, विद्वानों, राजादिकोंका संक्षेपमें वह परिचय जो बिखरा पड़ा है।